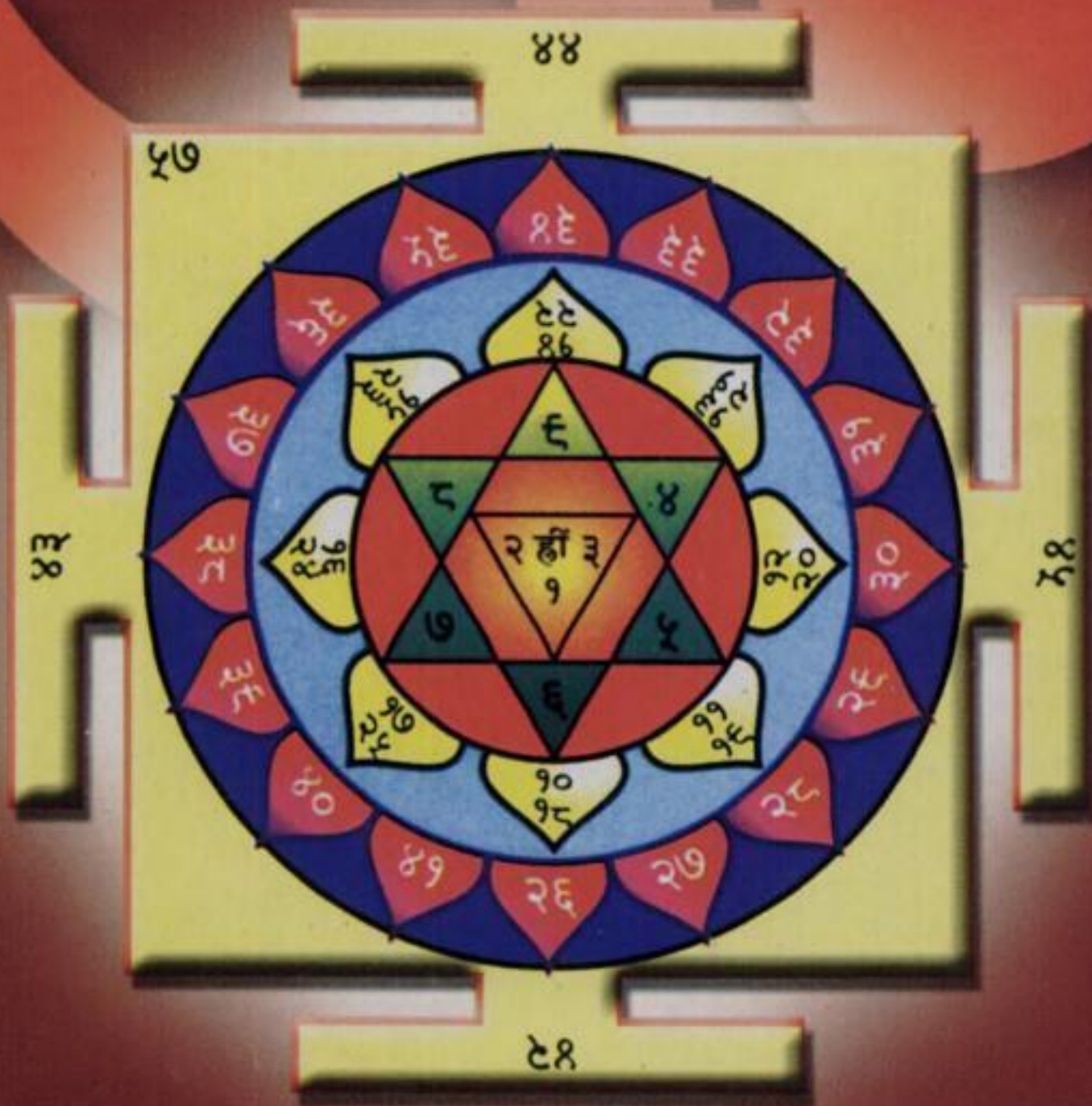


पं. राधाकृष्ण श्रीमाली

धूमावती एवं बगलामुखी तांत्रिक साधनाएं



धूमावती एवं बगलामुखी तांत्रिक साधनाएं, छिन्नमस्ता एवं त्रिपुरभैरवी तांत्रिक साधनाएं,
षोडशी एवं भुवनेश्वरी तांत्रिक साधनाएं, महाकाली एवं तारा तांत्रिक साधनाएं, मातंगी एवं कमला तांत्रिक साधनाएं

Copyrighted material

अनुक्रमणिका

1.	प्रस्तावना	7
2.	क्या है तांत्रिक साधना?	10
3.	तंत्र, योग और ध्यान	13
4.	आगम—निगम—रहस्य	24
5.	साधना—शब्द—रहस्य	29
6.	तांत्रिक साधनाओं का वैज्ञानिक रहस्य	37
7.	दरिद्रता की देवी धूमावती	42
8.	एकवक्त्र महारुद्र की महाशक्ति बगलामुखी	44
9.	भारत वर्ष के प्रधान शक्ति—पीठ	46
10.	तांत्रिक साधना में अनिवार्य है	58
11.	साधना को गुप्त रखने का महत्त्व	65
12.	शक्ति—रहस्य	75
13.	सिद्धि मिले तो कैसे?	81
14.	साधना पद्धति में हवन विधान	83
15.	मुद्रा तंत्र	86
16.	मंत्र योग	99
17.	षोडशी की तांत्रिक साधनाएं	104
18.	भुवनेश्वरी की तांत्रिक साधनाएं	128

प्रस्तावना

मानव बुद्धि के विकास का इतिहास चार अलग युगों से होता हुआ पूर्णता तक पहुंचता है। हमारे तांत्रिकों ने वह पूर्णता प्राप्त की थी। दर्शन और तंत्र का संबंध बुद्धि विकास के अंतिम स्तर से है। वह साधक के उपलब्ध वैज्ञानिक ज्ञान से बहुत आगे है। बात से अनभिज्ञ होने के कारण मनुष्य ने तंत्र को पिछड़ा हुआ और समय से बहुत पीछे कहकर उसका उपहास किया। परिणामतः मानव विकास की गति कुंठित हो गई और आज वह अवरुद्ध होकर हंसी की वस्तु बनी दिखाई दे रही है।

भारत की प्राचीनतम व गूढ़ विद्या है तंत्र शास्त्र। भारतीय विद्वानों, देवज्ञों, ऋषि-महाऋषियों का मानना है कि तंत्र शारीरिक, दैहिक, भौतिक कृत-कर्तव्यों का पालन करते हुए आध्यात्मिक क्षेत्र में प्रगति कर सकने का एक सर्वोत्तम साधन है। धीरे-धीरे लोग कालांतर में इस शक्ति का, इस देव विद्या का, आध्यात्मिक शक्ति का दुरुपयोग करने लग गए, फलस्वरूप तंत्र बदनामी की डगर पर बढ़ने लगा। व्यक्ति दोष हावी हो गया। आज तंत्र के क्षेत्र में दो नाम प्रायः सुनने में आते हैं (1) कौल (2) वाम मार्ग। सर्वसाधारण में यह धारणा फैलती चली गई कि तंत्र का मंतव्य मांस-मदिरा-मैथुन आदि पंचमकार के उपयोग में लिप्त रहकर जीवन व्यतीत करना है। उन तथाकथित तांत्रिकों के व्याभिचार व कामुकतापूर्ण क्रिया-कलापों के अनेकानेक सच्चे-झूठे किस्से सुनने में आते हैं।

विकास के प्रारंभ में मनुष्य बुद्धि और ज्ञान की अपेक्षा प्रवृत्तियों और भावनाओं से संचालित होता था। वह वर्षा और बिजली से डरता था, जीवन और मृत्यु आदि प्रकृति के विविध रूपों का वह केवल दर्शक मात्र था। उसका यह देखना पशुओं जैसा ही था, क्योंकि दोनों की ही बुद्धि बाहरी संसार से कोई प्रतिक्रिया न करती थी। जब पर्यावरण और वस्तुएं सुखद और अनुकूल होती थीं तो वह उनका आनंद लेता था, किंतु उनके दुखद और प्रतिकूल होने पर उन्हें मौन रहकर सहन करता था। वह जो कुछ देखता था, उसमें कोई सुधार करने का प्रश्न ही उसके मन में न उठता था। 'यह जैसा है, ठीक है।' उसके दिमाग में यही था।

इसके पश्चात् मानवता आगे बढ़कर 'निरीक्षण के युग' में पहुंची। मनुष्य अब देखने मात्रा से ही संतुष्ट न रहा। वह विचार करने लगा कि हमारे आसपास की प्रकृति की घटनाएं क्यों और कैसे घटित होती हैं? इस प्रकार उसकी बुद्धि क्यों और कैसे खोजने लगी।

तंत्र का वास्तविक अर्थ तो यह है कि तंत्र में जीवन संबंधी अत्यंत गंभीर और तथ्यपरक

स्वस्थ विचारों का समावेश होता है। जिस प्रकार हम अपने भौतिक शरीर में गुर्दे की उपयोगिता और उसकी वास्तविकता को तब तक नहीं समझ सकते, जब तक सजीव शरीर की संचालन क्रिया में अन्य भागों के साथ उसके संबंध का अर्थ न समझ लें, उसी प्रकार मानव जीवन के संपूर्ण क्रिया-कलापों का विचार किए बिना हम तंत्र की वास्तविकता को नहीं समझ सकते। तंत्र वास्तव में कोई काल्पनिक गल्प नहीं है अथवा सच्चे-झूठे किस्सों का नाम तंत्र नहीं है। वास्तव में संपूर्ण व्यावहारिक और जीवन की समस्याओं पर वास्तविकता का दिग्दर्शन कराने वाला साहित्य ही तंत्र है।

वैज्ञानिक युग अब भी समाज के कल्याण के लिए प्रकृति की शक्तियों का खोज कर रहा है। सभी लोग इसी दिशा में प्रयत्न कर रहे हैं और प्रकृति के नियमों की अनंत खोज में निमग्न हैं। संक्षेप में, यही युग है जिसमें हम लोग आज हैं। जब वैज्ञानिक अपने-अपने क्षेत्र में खोज करने में लगे हों, तो एक समय ऐसा आता है, जब वे अपनी परिपक्वता में पहुंचकर देखते हैं कि प्रकृति के सभी नियमों में एक विचित्र सामंजस्य है। वे इस प्रश्न पर विचार करने के लिए विवश हो जाते हैं कि इन शाश्वत नियमों का निर्माता कौन है, इन नियमों को ठीक-ठाक कार्य करने का आदेश कौन देता है। इस प्रकार उनका वस्तुगत परीक्षण आत्मा के चिंतन में बदल जाता है और वे उन सब वस्तुओं का मूल कारण खोजने लगते हैं, जो प्रकृति में विद्यमान होते हैं। इस खोज और चिंतन के युग में मनुष्य का प्रवेश है।

तंत्र व्यक्ति को, निश्चित रूप से मनुष्य जीवन को अथवा प्राणिमात्र को अपनी ओर तो आकर्षित करता ही है, परंतु कालांतर में कुछ स्वार्थी साधकों ने अपने स्वार्थ के लिए इसमें कुछ वीभत्स साधनाओं का भी समावेश कर लिया, जिससे जन-साधारण में इसके प्रति धीरे-धीरे घृणा का भाव पनपता चला गया और वास्तविकता से तंत्र दूर होता चला गया। धीरे-धीरे इन स्वार्थी साधकों ने ऐसे साहित्य का निर्माण कर लिया जिससे वास्तविक साहित्य में सड़ांध पैदा हो गई। वास्तविकता से दूर मिलावटी साहित्य समाज में आने लगा। ऐसे साहित्य और ऐसे श्लोकों का निर्माण हो गया जो भ्रष्ट साधनाओं का समर्थन करते थे। कुलार्णव तंत्र में इन तथ्यों को स्वीकार किया गया है।

पारस्परिक ज्ञान से शून्य और झूठे ज्ञान का ढोंग रचने वालों ने धीरे-धीरे कौल धर्म में अपनी बुद्धि की कल्पनाएं समाविष्ट कर दीं। आज के परिप्रेक्ष्य में भी कुछ लोग तंत्रवेत्ता होने का ढोंग रचकर कुशलतापूर्वक सत्साहित्य के विपरीत अर्थ करते दिखाई देते हैं। अनेक धूर्तों ने इधर-उधर से झूठा-सच्चा, सत्य-असत्य, कूड़ा-करकट एकत्रित करके अपने तंत्र को प्रकाशित करा लिया। यही कारण है कि आज बाजार में इंद्रजाल जैसे रूप में भी तंत्र की पुस्तकें दिखाई देती हैं।

मूल रूप से तंत्र के दो भेद माने गए हैं, एक वैदिक और दूसरा अवैदिक। वेदानुकूल और वेद बाह्य प्रामाणिक और अप्रामाणिक है। श्रुति के भी दो भेद हैं। एक वैदिक श्रुति और दूसरी तांत्रिक श्रुति। इसमें वेदों के अनुकूल सिद्धांतों के प्रतिपादन करने वाले तंत्रों

की ओर ध्यान आकृष्ट किया गया है और उन्हें वेद के अनुकूल मान्यता प्रदान की गई है। पांचरात्र और वैशानक जैसे तंत्र और पशुपति, शैव सिद्धांत आदि जैसे तंत्र वेद के अनुकूल माने गये हैं। फिर भी इनमें कुछ अवैदिक विचार होने के कारण अवैदिक कहा जाता है। शाक्त तंत्रों पर तो विशेष प्रकार से अवैदिक होने के आरोप या आक्षेप लगाए जाते हैं। सात प्रकार के आचारों में से एक वामाचार ही ऐसा है जो उन्हें अवैदिक ठहराता है। वैसे इनमें अनेक वेदानुकूल तंत्र उपलब्ध हैं। परंतु भ्रष्ट आचार का निर्देशन करने वाले तंत्रों की भी कमी नहीं है। शाक्त मत में भी दो प्रकार के आचार हैं, एक कौलिक और दूसरा समयी। कौलिक पंचमकारों का प्रत्यक्ष प्रयोग करते हैं, परंतु समयी उनके प्रतीकों की उपासना करते हैं और प्रत्यक्ष आराधना को शास्त्रविरुद्ध मानते हैं।

तंत्र शास्त्रों के अध्ययन करने से प्रतीत होता है कि उनके उद्देश्य विकृत नहीं हैं। कालक्रम से जिस प्रकार अन्य शास्त्रों और जाति संप्रदायों में अनेक प्रकार के दोष उत्पन्न हो गये, उसी प्रकार तंत्रों में स्वार्थी व्यक्तियों ने मिलावट करके अपने मतों का समर्थ करने के लिए ऐसे सिद्धांतों का प्रचलन किया जिन्हें घृणित समझा जाता है। तंत्र का उद्देश्य कभी भी साधक को निम्नगामी प्रवृत्तियों में उलझाना नहीं है, अपितु उसे एक ऐसा व्यवस्थित मार्ग सुझाना है जिससे वह जीवन में कुछ आदर्श कार्य कर सके।

धीरे-धीरे तंत्र मार्ग का भी अधिकांशतः रूपांतर हो गया है और सामान्य लोगों ने उसे मारण, मोहन, वशीकरण जैसे निकृष्ट और दूषित कार्यों का ही साधन मान लिया है, परंतु मूल रूप से यही इसका उद्देश्य जान पड़ता है कि जो लोग घर-गृहस्थी को त्याग कर तप और वैराग्य द्वारा आत्मसाक्षात्कार करने में असमर्थ हैं, वे अपने सामाजिक और सांसारिक जीवन का निर्वाह करते हुए भी आध्यात्मिक दृष्टि से उन्नति कर सकें।

श्रद्धा और विवेक के साथ तंत्र शास्त्र का अध्ययन किया जाए तो पता चलता है कि तंत्र और साक्त धर्म का ध्येय जीवात्मा की परमात्मा के साथ, व्यष्टि की समष्टि के साथ अभेद सिद्धि ही है और तांत्रिक उपासना का भी यदि आलोचनात्मक अध्ययन किया जाए तो सही अवगत होता है कि इसके भिन्न-भिन्न विधानों की सृष्टि भी इसी उद्देश्य को सिद्ध करने के लिए हुई है। कुछ विद्वानों की यही धारणा कि तंत्रों ने व्याभिचार को बढ़ावा दिया है, सत्य नहीं है। इनके उद्देश्य तो उच्च हैं।

क्या है तांत्रिक साधना?

तंत्र की साधना करना तलवार की धार पर चलने के समान है। कुलार्चण तंत्र का कथन है कि 'कृपाण की तीक्ष्ण धार पर तो चला जा सकता है, व्याघ्र को गले लगाया जा सकता है, फणिधर नाग के फन पर वार किया जा सकता है, किन्तु तंत्र की साधना इन सबसे कठिन है'—

कृपाणधरागमनादू व्याघ्रकण्ठावलम्बनात् ।

मुजंग धारणात्रूममशक्यं कुलसाधनाम् ।।

फिर इतनी दुष्कर साधना की ओर प्रवृत्त होने में कौन—सा आकर्षण है, इस जिज्ञासा का समाधान करते हुए रुद्रयामल तंत्र कहता है कि 'तंत्र' की साधना करने से साधक को भोग और मोक्ष दोनों करतलगत हो जाते हैं— भोगश्च मोक्षश्च करस्थ एव ।

तांत्रिक साधना में वैराग्य या संन्यास लेकर घर—गृहस्थी छोड़ने की आवश्यकता नहीं है। गृहस्थाश्रम में रहते हुए साधक साधना का चरम लक्ष्य—मोक्ष प्राप्त कर सकता है। तांत्रिक साधना का पथ बहुत ही अगम, दुरुह और कण्टकाकीर्ण है। इस अगम पथ को सुगम बनाने के लिए तंत्र—साधना में सद्गुरु की प्रधानता स्वीकार की गई है। तंत्र की साधना अमृत का अनुसंधान करती है। सद्गुरु साधक को अनुसंधान की प्रक्रिया बताता है, उसका निर्देशन प्राप्त कर साधक स्वयं 'शिव' बना जाता है।

तांत्रिक—साधना में वर्ण भेद, आदि कुछ भी नहीं है। सभी मनुष्य एक परमशक्ति माँ की सन्तान हैं, न कोई ऊँचा है, न कोई नीच है। प्रत्येक व्यक्ति को तंत्रशास्त्र का अध्ययन करने और तांत्रिक साधना करने की पूरी स्वतन्त्रता है। इतनी उदारता और इतना अधिकार प्राप्त होने पर भी तांत्रिक साधना में दक्ष साधकों की बहुत कमी रहती है। इसका कारण यह है कि तंत्रशास्त्र का सिद्धान्त है 'देवता' बन कर देवता की उपासना करनी चाहिए अदेव बनकर नहीं।

देव एव यजेद्देवं नादेवो देवमर्चयेत्

तात्पर्य यह है कि साधक को पहले अन्तर्बाह्य शुद्धि करके दिव्य भाव, दिव्य गुण सम्पन्न बनना पड़ता है। यह सर्वसाधारण के लिए सम्भव नहीं होता है।

जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में तांत्रिक साधना की अभिव्याप्ति है। यह केवल व्यक्तिगत लाभ के लिए नहीं, बल्कि समाज, राष्ट्र और पूरे विश्व के लिए लक्ष्य रखती है। तांत्रिक साधना के अंतर्गत रासायनिक क्रियाओं द्वारा धातुओं को बदल देने, नवीन कल्पित रत्नों का निर्माण करने, अमूल्य यन्त्रों के निर्माण करने और अन्नवृद्धि कारक, पुरुषार्थ वृद्धि तथा आयु वृद्धि के अनेक प्रयोग हैं। शत्रु राष्ट्र पर विजय प्राप्त कराने तथा अतिवृष्टि,

अनावृष्टि, उत्पात, महामारी, महर्घता आदि के निवारण के लिए तांत्रिक साधनाएँ अमोघ सिद्ध हुई हैं।

साधना के चार योग होते हैं—मंत्रयोग, हठयोग, राजयोग और लययोग। तांत्रिक साधना में इन चारों योगों का उपयोग किया जाता है। मंत्रयोग में किसी देव प्रतिमा का, हठयोग में ज्योति का, राजयोग में अद्वैत ब्रह्म का और लययोग में बिन्दु का ध्यान किया जाता है। अपने इष्टदेव में लीन हो जाना ही तांत्रिक साधना का चरम लक्ष्य है। इस लक्ष्य की सिद्धि उक्त चार योगों द्वारा की जा सकती है, किन्तु लययोग से सुगमतापूर्वक लक्ष्य सिद्धि प्राप्त होती है। राजयोग की कोई साधना नहीं होती, वह एक अवस्था विशेष है, लययोग की साधना के द्वारा जब साधक अपने इष्टदेव में लीन हो जाता है, तब वह अद्वैत ब्रह्म में रमण करता है। राजयोग की यही सिद्धावस्था है। साधक जिस देवता की साधना करता है, साधना सिद्ध होने पर वह उसी देवता का स्वरूप बन जाता है।

शाक्त-तंत्र दर्शन के अनुसार साधनावस्था को द्वैत और सिद्धावस्था को अद्वैत माना गया है। द्वैत (शिव और शक्ति) को अद्वैत रूप में अनुभव का तद्रूप हो जाना ही तांत्रिक साधना का उद्देश्य है।

तन्त्र मुख्यतया तीन भागों में विभक्त है—कादि, हादि और कहादि। इन्हें तांत्रिक भाषा में कूटलय कहते हैं। जो तंत्र आदि महाशक्ति आद्या-महाकाली के विषय का प्रतिपादन करता है वह कादि है, जो श्री विद्या के रहस्य का प्रतिपादन करता है वह हादि है और जो तंत्र द्वितीया महाविद्या तारा का रहस्य प्रतिपादित करता है वह कहादि है।

कादि, हादि और कहादि तंत्र-साधना के क्षेत्र में मत मान लिए गए हैं, तदनुसार कादिमत, हादिमत और कहादिमत के अलग-अलग मंत्र और यंत्र विभक्त कर दिए गए हैं, इन मंत्रों और यंत्रों की साधनाएँ भी अपने-अपने मत के अनुसार भिन्न-भिन्न हैं। जैसे कादिमत (महाकाली) के संबंधित यंत्र केवल शक्ति त्रिकोणों से बनते हैं, हादिमत (श्री विद्या) से संबंधित यंत्र शिव-शक्ति त्रिकोणों से बनते हैं और कहादिमत (तारा) से संबंधित यंत्र उभयात्मक होते हैं अर्थात् शक्ति-त्रिकोणों और शिव शक्ति त्रिकोण का मिश्रण इन यंत्रों की रचना में होता है।

संप्रदाय भेद से तांत्रिक साधना 'शैव, शाक्त, वैष्णव, सौर और गाणपत्य' भेद से पाँच प्रकार की है। शिव की साधना करने वाला संप्रदाय शैव, सूर्य की साधना करने वाला संप्रदाय सौर और गणपति की साधना करने वाला सम्प्रदाय गाणपत्य कहलाता है।

तंत्रों में संप्रदाय भेद, आम्नाय भेद, महाविद्या भेद होने से विभिन्न तंत्र शास्त्र और विभिन्न तांत्रिक साधनाएँ हैं। इन शास्त्रों, ग्रंथों की गणना संभव नहीं है। शाक्त सम्प्रदाय में ही ज्ञात ग्रंथ, उपलब्ध तांत्रिक सामग्री सैकड़ों-हजारों की संख्या से अधिक हैं। काल पर्यय मार्ग से शाक्त तंत्र 64 हैं, उपतंत्र 321 हैं, संहिताएँ 30 हैं, चूड़ामणि 100 हैं, अर्णव 9 हैं, यामल 8 हैं। इनके अतिरिक्त डामरतंत्र, उड्डामर तंत्र कक्षपुटी तंत्र, विभीषणी तंत्र, उद्यालाप तंत्र आदि हजारों, लाखों की संख्या में हैं। यदि यह कहा जाए कि तंत्र शास्त्र किनारा रहित सागर है तो अत्युक्ति न होगी।

विविध प्रकार के ये तंत्र अधिकारी भेद से भिन्न-भिन्न कोटि में नियोजित होते हैं। 'यान', 'काल' आदि भिन्न-भिन्न पर्यायों से इनकी गणना अलग-अलग होती है, इसलिए कोई भी यह कहने का दावा नहीं कर सकता कि तंत्र विद्या केवल इतनी ही है।

तांत्रिक साधना में मंत्र-यंत्र-अन्तर्योग बाह्य पूजन की जो साधनाएँ हैं, इन सबमें परस्पर विलक्षण सामंजस्य है। यह सामंजस्य तभी समझा जा सकता है जब तंत्र के चारों महावाक्यों का पूर्ण रूप से चिन्तन किया जाए। चारों महाकाव्य निम्नांकित रूप से मंत्र का सामंजस्य प्रकट करते हैं।

1. परा-पशन्ती-मध्यमा-बैखरी।
2. स्पन्दन-मात्रा-कम्प-अक्षर
3. विश्व-तेजस्-प्राज्ञ-पुरुष
4. जाग्रत-स्वप्न-सुषुप्ति-तुरीय
5. चतुरस्र-वृत्त-त्रिकोण-बिन्दु
6. कामरूप-जालन्धर-पूर्णशैल-उड्याण
7. स्थूल-सूक्ष्म-कारण-महाकरण
8. अग्नि मंडल-सूर्य-सोम-परतत्त्व

तांत्रिक साधना में मुख्य रूप से यही भूमिकाएँ महत्त्व रखती हैं और इन भूमिकाओं का रहस्य समझने के लिए पूर्ण महादीक्षा के महाकाव्य सहायक होते हैं। तांत्रिक-साधना में दीक्षा की आवश्यकता साधक को विशुद्ध, अम्लान बनाने के लिए है। दीक्षा रूपी अग्नि कुंडलिनी के जाग्रत होने से साधक का आर्णवमल, मायामल विनष्ट हो जाता है, कर्ममल समाप्त हो जाता है और वह शिवतत्त्वमय बन जाता है। इसलिए तंत्र साधना में दीक्षा और अभिषेक अनिवार्य संस्कार माने गए हैं।

दीक्षा, अभिषेक, भूत शुद्धि, तत्त्व शुद्धि प्रत्येक तांत्रिक साधना के प्रारम्भ का ऐसा विधान है, जो विज्ञान-सम्मत है। भावना और क्रिया द्वारा साधक का अन्तर्बाह्य निर्मल हो जाना ही इन विधानों का मुख्य उद्देश्य है। निर्मलता प्राप्त होने पर साधक को सहज अवस्था प्राप्त होती है और सहज अवस्था प्राप्त होने पर शक्ति-बोध होता है। जो वेदान्तियों का परब्रह्म है, शैवों का शिव है, वैष्णवों का विष्णु है, इस्लाम का अल्लाह है, ईसाईयों का स्वर्ग-पिता है, बौद्धों का निर्वाण है, जो सभी धर्मों का सर्वशक्तिमान ईश्वर है वही पराशक्ति महाशक्ति है, वही महाकाली, महालक्ष्मी, महासरस्वती है, वही दुर्गा है, त्रिपुर सुन्दरी है, ललिता है और वही मूल-प्रकृति, चित्त शक्ति है।

तांत्रिक साधना अत्यधिक सिद्धियों को देने वाली है, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं, किन्तु यह साधना तभी सिद्धि, सफलता प्रदान करती है जब साधक पवित्रता, नम्रता, उदारता, श्रद्धा आदि गुणों से सम्पन्न होकर किसी गुरु के निर्देशन में अभ्यास करें। यदि ये गुण साधक में न हों तो वह प्राप्त सिद्धि, शक्ति का दुरुपयोग करता है। इन्द्रजालिक चमत्कार, जादूगरी तंत्र-साधना के अन्तर्गत नहीं है। तन्त्र एक गुप्त विद्या है, जो पुस्तकें पढ़कर नहीं आचार्यों और गुरुओं के समीप जाने पर प्राप्त होती है।

तंत्र, योग और ध्यान

महाश्री गायत्री की कृपा से इस पुस्तक में हमने महाकाली एवं तारा की तांत्रिक साधनाओं के ध्यानों, स्तोत्रों, कवचों और मंत्रों को प्रस्तुत किया है, जो स्वयंसिद्ध है। अतः इनके साधन हेतु न्यास, विनियोग, देश-काल, जाति-धर्म, शुद्ध-अशुद्ध आदि का विशेष विचार करने की आवश्यकता नहीं है। यहाँ दिये मंत्रों के प्रयोग हेतु दीक्षा भी अति आवश्यक नहीं है, क्योंकि ये मंत्र कीलित और अभिशप्त नहीं हैं। श्रद्धा और भक्तिपूर्वक इनके प्रयोग से महाश्रीयों की कृपा शीघ्र होती है।

यह ध्यान देने योग्य है कि किसी भी जाति अथवा देश की उन्नति महाविद्या (ज्ञान-विज्ञान), महाशक्ति (बल-पौरुष), महाश्री (धन-ऐश्वर्य) और योग के आधार पर होती है। प्राचीन काल में हम साधनाओं, महाशक्तियों और महाश्रीयों और योगबल से ही जगद्गुरु बने थे और इक्किस्वीं शताब्दी में हम महाविद्याओं, महाश्रीयों और योगबल का अवलम्बन कर पुनः जगद्गुरु बन जाएंगे।

यह आश्चर्यजनक तथ्य है कि इन साधनाओं का विषद वर्णन शाक्तप्रमोद, रुद्रयामल तंत्र आदि ग्रंथों में दिया गया है, परन्तु उनका पूजन-अर्जन लुप्त प्राय हो गया है। उससे भी आश्चर्यजनक तथ्य यह है कि श्री महाशक्ति नौ दुर्गाओं का पूजन-अर्चन हम बिना उनके स्तोत्र, कवच, मंत्र यंत्रों आदि के कर रहे हैं। परन्तु सबसे अधिक आश्चर्यजनक तथ्य यह है कि महाश्री गायत्री विद्या तंत्र के साथ साथ दस महाश्री गायत्रियों का पूजन-अर्चन भी लुप्त हो गया है।

श्री दस महाविद्याओं से समबद्ध श्री दस महाशक्तियों, महाश्रीयों, ग्रहों और ध्यान चक्रों की तालिका दी जा रही है :-

महाविद्या महाशक्ति महाश्री ग्रह ध्यान चक्र
काली आदिदुर्गा श्वेता शनी-सहस्रार
तारा शैलीपुत्री नीला गुरु मूलाधार
षोडशी ब्रह्मचारिणी गौरा अग्नि वायु स्वाधिष्ठान
भुवनेश्वरी चन्द्रघण्टा अरुणा शुक्र मणिपूर
भैरव कूश्माण्डा सिंदूरा रवि अनाहत
छिन्नमस्ता स्कन्दमाता छिन्ना राहू केतू विशूद्ध
धूमावती कात्यायनी धूमा चन्द्र आज्ञा
बगलामुखी कालरात्रि पीता मंगल मानु
मातंगी महागौरी श्यामा बुध सोम
कमला सिद्धिदात्री कंचना करुण निर्वाण

धूमावती एवं बगलामुखी तांत्रिक साधनाएं

प्राचीन भारत के अनेक श्री दस महाविद्या शक्तिपीठों में श्री दस महाविद्याओं के साथ श्री दस महाशक्तियों, दस महाश्रीयों और नवग्रहों को स्थापना श्री शिवलिंग को मध्य में स्थापित करके की गई थी। क्योंकि शिवत्व की रक्षा बिना महाविद्याओं (ज्ञान-विज्ञान), महाशक्तियों (बल-शौर्य), महाश्रीयों (धन-ऐश्वर्य) और नव ग्रहों के समन्वय के बिना नहीं हो सकती है।

तंत्र, योग और ध्यान भारतीय दर्शन के प्रमुख अंग हैं।

‘तंत्र’ संस्कृत के दो शब्द ‘तनोति’ (विस्तार) और ‘त्रायति’ (मुक्ति) से बना है अतः तंत्र वह विज्ञान है, जिसके द्वारा साधक के त्राण हेतु ज्ञान का विस्तार किया जाता है, इस विज्ञान को आगम भी कहा जाता है। तंत्र का सहज अर्थ तकनीक, प्रविधि, प्रणाली, प्रक्रिया अथवा विद्या होता है। प्रायः कर्म, उपासना और ज्ञान के स्वरूप को ‘निगम’ (वेद) कहते हैं, और उसके साधनभूत उपायों को ‘अगम’ कहते हैं।

‘योग’ संस्कृत की ‘युज’ धातु से उद्भूत है, जिसका अर्थ ‘मिलन’ है। अर्थात् ‘योग’ आत्मा और परमात्मा के मिलन का विधान है।

श्री गायत्रीसहस्रनाम के अनुसार गायत्री के 365वें से 370 वें नाम क्रमशः डामरी (तंत्र शास्त्र की अधिष्ठात्री), डाकिनी, डिम्बा (बाल रूपा), दुण्डुमारैकानिर्जिता (दुण्डुमार नामक राक्षस को परास्त करने वाली), डमरी तंत्र मार्गस्थिता (डामर तंत्र के साधन में स्थिता) और डमड्मड् डमरु नादिनी (डमड्-डमड् ध्वनि से डमरु बजाने वाली) हैं। तथा—

डामरी डाकिनी डिम्बा दुण्डुमारैनिर्जिता ।

डामरीतन्त्रमार्गस्था डमड् डमरुनादिनी ।।

तांत्रिक साधनाओं का मुख्य उद्देश्य कुंडलिनी शक्ति को जाग्रत कर सहस्रार में पहुँचाना है। इसलिए इन साधनाओं की सिद्धि से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष अर्थात् चारों पुरुषार्थों की प्राप्ति होती है, जबकि अन्य तंत्रों से केवल धर्म, अर्थ और काम अर्थात् तीन पुरुषार्थों की प्राप्ति होती है।

कुंडलिनी जागरण से ब्रह्माण्ड के सभी रहस्यों का ज्ञान संभव है। परा, पश्यन्ती, मध्यमा और बैखरी वाणी के रूप में उसके प्रकट होने पर मंत्रात्मक जगत् की सृष्टि होती है। योगचूडामण्युपनिषद् के अनुसार—

कुण्डलिन्यां समुद्भूता गायत्री प्राणधारिणी ।

प्राणविद्या महाविद्या यस्तांवेत्त स वेदवित् ।

भावार्थ

प्राणधारिणी, गायत्री का उद्भव कुण्डलिनी है। गायत्री को प्राणविद्या (महाशक्ति) और महाविद्या भी कहते हैं। जो इन साधनाओं को जानते हैं, वे वेदज्ञ हो जाते हैं।

साधना शक्ति के रूप में ब्रह्म की उपासना विद्या है, अतः साधना विद्या ब्रह्मविद्या है।

सनातन धर्म में शक्ति की उपासना परब्रह्म और परब्रह्म से तत्त्व की उपासना मानी जाती है। वृन्दावन वासिनी राधारानी, चित्रकूटनिवासिनी सीता, शैवों की उमा, शाक्तों की (दस दुर्गा), ब्रह्म योगियों और तांत्रिकों की दस साधनाओं और श्रीविद्या उपासकों की षोडशी (त्रिपुरसुन्दरी) शक्ति उपासना की प्रमुखता के प्रमाण हैं। आचार्य शंकर ने सौन्दर्य-लहरी में भगवती उमा के इस शक्ति उपासना की साधना की विषद व्याख्या की है, जो श्रीविद्या के ब्रह्म तत्त्व को निरूपित करता है।

महाश्री गायत्रीविद्या की उपासना तंत्रों की आधारभूत है, जो महाश्री रूपा कुण्डलिनी के जागरण द्वारा अर्थात् सुभगोदय (सुभग-कुण्डलिनी, उदय-जागरण) द्वारा सिद्ध की जा सकती है। यह उपासना वैदिक से चली आ रही है। परन्तु अब लुप्तप्राय है।

यह बात प्रसिद्ध है कि महर्षियों ने भी अपने गोपनीय महाधन (गायत्री तंत्र) का बखान नहीं किया। यदि करते तो क्या अनेक तंत्रों की तरह गायत्री विषयक विद्या किसी स्वतन्त्र ग्रन्थ (गायत्री तंत्र) की रचना न हुई होती? परन्तु जब मूर्ख मनुष्य भी माया के वशीभूत अपने धन को गुप्त रखना जानते हैं, तो फिर महर्षिजन महामाया के वशीभूत अपने अत्यन्त कष्ट से उपार्जित, मोक्षैकसाधनभूत महाधन को कैसे प्रकाशित कर सकते थे?

हमारे अनेक योग, ध्यान और तंत्र के ग्रंथ हमारी अकर्मण्यता और विदेशियों के कुचक्र से नष्ट हो गये हैं। जो ग्रन्थ बचे-खुचे हैं, वे हमारे ऋषियों द्वारा कीलित और अभिशप्त हैं। जिनके अनेकों बार पारायण से भी कोई सिद्धि प्राप्त नहीं होती है, इसी कारण साधकों में धर्म ग्रन्थों में वर्णित पूजा-पाठ के प्रति शनैः शनैः श्रद्धा कम हो रही है। हमें अपनी इस भूल का परिमार्जन करना है, तभी हम अगली शताब्दी में पुनः जगद्गुरु बन सकेंगे। कहा जाता है कि—

मृत और जीवित जाति का साहित्य जीवन चित्र है।

वह नष्ट-भ्रष्ट है, तो जान लो वह जाति भी अपवित्र है।।

गोस्वामी तुलसीदासजी भी लिखते हैं—

हरित भूमि तृण संकुलित, समुझि परय नहि पंथ।

जिमि पाखण्ड विवाद से, लुप्त होय सद ग्रन्थ।

श्री गायत्री सहस्रनाम से श्री गायत्री का 99वाँ नाम 'लुप्तधर्मप्रवर्तनी' है। यथा—

ऋग्वेदनिलया ऋज्वी लुप्तधर्मप्रवर्तनी।

लूतारिवरसम्भूता लूतादिविषहारिणी।।'

महाश्री गायत्री ने लुप्त गायत्री तंत्र को प्रकट करने की मुझे आज्ञा प्रदान की है। अतः मैं उनकी आज्ञा को शिरोधार्य करके, प्रसाद स्वरूप लोक कल्याण हेतु महाश्री गायत्री तंत्र प्रकट कर रहा हूँ।

महाश्री गायत्रीविद्या तंत्र की लुप्त देवी रुद्राणी गायत्री हैं जिनके सतरूप का वर्णन इस प्रकार है—

मध्याह्ने सरस्वती, रविमण्डलमध्यस्था, शुक्लवर्णा, चतुर्भुजा, त्रिशूलडमरुषपात्रकरा,

धूमावती एवं बगलामुखी तांत्रिक साधनाएं

वृषासनमारुढ़ा, युवती, रुद्राणी, रुद्रदैवस्था, सामवेदोदाहता ध्येया ।

अर्थात् मध्य काल में गायत्री का युवती, सामवेद स्वरूपणी, रुद्ररूपा, वृषभासना, शुक्लवर्णा, चतुर्भुजा, त्रिशुल, डमरुख, पाष ओर पात्रधारिणी तथा रविमण्डलमध्यस्थाके रूप में ध्यान करें ।

श्रीमद् देवीभागवत के द्वादश स्कन्ध के अनुसार गायत्री के निम्नलिखित तीन स्वरूपों का वर्णन है—

प्रातर्बाला च मध्याह्ने यौवनस्था भवेत्पुनः ।

वृद्धा सां भगवती चिन्त्यते मुनिभिः सदा ।

हंसस्था वृषभवाहिनी तथा गरुडारुढा,

ऋग्वेदाध्यायिनी मूर्मा दृष्यते या तपस्विभिः ।।

अर्थात् प्रातः सन्ध्या के समय कुमारी हंसारुढ़ा, मध्याह्न काल में युवती वृषभारुढ़ा और सायंकाल में वृद्धा गरुडवाहना के ध्यान का वर्णन आया है । वे ऋग्वेद का पारायण करती हैं, ऐसी मुद्रा में तपस्वीगण भूमण्डल पर उनका दर्शन करते हैं । यद्यपि श्रीमद् देवीभागवत के द्वादश स्कन्ध में गायत्री को प्रातः हंसारुढ़ा, मध्याह्न में गरुडवाहना और संध्याकाल में वृषभारुढ़ा माना गया है । कल्याण के शक्ति अंक में 'गायत्री तत्त्व' विवेचन करते हुए परिव्राजक ब्रह्मचारी श्री गोपाल चैतन्य देव लिखते हैं—

साधक त्रिसंध्या के समय गायत्री के इन्हीं तीन रूपों की साधना करते-करते धीरे-धीरे साधन मार्ग के उच्चतर सोपान में अग्रसर होने पर चतुर्थवा निशा संध्या का अधिकार पाते हैं । यही निवृत्ति-मार्ग का परम धर्म है । इस निशा सन्ध्या की बात आज ब्रह्मज समाज एकदम ही भूल गया है । साधन मार्ग के गुप्त रहस्य सम्पूर्ण रूप से शिक्षा के अभाव के कारण एकदम लुप्त हो गये हैं । यह बात कहने में भी कोई अत्युक्ति न होगी । कर्म मार्ग ब्रह्म-शक्ति की पृथक्-पृथक् आराधना करने से जब चित्त सुसंयत तथा एकनिष्ठ हो जायेगा तभी तुरीया या निशा संध्या की व्यवस्था की जा सकेगी । वेदान्त-शास्त्र में उसी तुरीया संध्या की विधि का वर्णन है । अतः वेद में कर्म काण्ड एवं वेदान्त में ज्ञानकाण्ड प्रकाशित किया गया है ।

साधक पहले कर्म मार्ग में दृढ़ रहकर गायत्री देवी की त्रिशक्ति उपासना भिन्न-भिन्न भावों से करें । ऐसा करते-करते जब गुणों का क्षय हो जायेगा तभी गुणातीत निशा संध्या के समय उस त्रिशक्ति का समन्वय (एकता) करके एकाधार में पूर्ण 'महाश्री-गायत्रीविद्या' की आराधना करें ।

अ-कार को सत्त्वगुणात्मिका वैष्णवी, उ-कार की रजोगुणात्मिका ब्रह्मी, म-कार को तमोगुणात्मिका रुद्राणी और इन तीनों की समष्टि को ओंकार वा प्रणव-स्वरूपिणी परमा-प्रकृति दक्षिण कालिका कहते हैं । यही तुरीयावस्था है—महाप्रलय की प्रतिकृति है । अतः निबिड़ जलदावृत महा अमा-निषा की घोर सान्द्रान्धकार-परिपूरित महानिशा में, नर-कंकाल-शम-मुण्ड-परिवृता शिवा की वापदसंकुल भीषण मशान-भूमि में आराधना करने की व्यवस्था है । सर्वसाधारण के क्षुद्र हृदयागार में अनन्त-ब्रह्म-महासमुद्र

को धारण करने का स्थान बिल्कुल ही नहीं हो सकता, इसी कारण साधक गुणातीत तुरीयशक्ति की आराधना करने के लिए गुणमयी त्रिगुणात्मिका महाशक्ति ही आराधना करते हैं। साधना की उच्च समाधि अवस्था में जब साधक जल-कण (बिन्दु) के रूप में महासमुद्र में विलीन हो जाता है, तभी अचिन्त्य तथा अनिर्वचनीय तुरीयभाव से उसे तुरीयावस्था प्राप्त होती है और सच्चिदानन्द लाभ होता है। यही जीव की जीवनमुक्ति अवस्था है।

निशा-संध्या के समय त्रिशक्ति का समन्वय एक ही आधार में करके पूर्ण गायत्री शक्ति की साधना ही साधकों के लिए एकमात्र काम्य विषय है। इसीलिए वह साधक मण्डली में अब तक पूर्णतः गुप्तरूप में संरक्षित रहा है। आसक्ति-विरक्ति-रहित निष्काम योगी महाश्री गायत्री देवी की तुरीयावस्था की साधना करते हैं। अतः ब्रह्मज्ञ का श्रेष्ठ धर्म ही योग है। एक दिन ऐसा था जब सागर धरा का राजदण्ड भी ब्रह्मज्ञ के सम्मुख हेय हो गया था। ऐसे ब्रह्मज्ञ व्यक्ति के लिए समझ कर्म का अनुष्ठान तथा विसर्जन दोनों ही एक समान हैं केवल महाश्री गायत्री देवी की आराधना करके ही पुराकाल में ब्रह्मज्ञों ने 'एकमेवाद्वितीयम्', 'अयमात्मा ब्रह्म', 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म', 'सोऽहम्', 'तत्त्वमसि' आदि महावाक्यों की सृष्टि की थी, जिनकी अमृतधारा पाकर आज भी हम तृप्त और कृतार्थ हो रहे हैं।

श्रीमद् देवीभागवत के बारहवें स्कन्ध में कहा गया है—शिव-शक्ति के हाथ, नेत्र, अश्रु और स्वेद से प्रकट हुयीं दस दुर्गा भी गायत्री हैं।

श्री गायत्री सहस्रनाम के अनुसार श्री गायत्री का 133वाँ नाम कुण्डली (कुण्डलिनी शक्ति के रूप में विराजमान देवी) हैं।

महाश्री गायत्री विद्या मन्त्र के जप से कुण्डलिनी शक्ति का जागरण होता है, शक्ति के जागरण से आत्मज्ञान का उदय होता है, इसलिए मन्त्र को देवता का अधिष्ठान कहा गया है। शक्ति-दीक्षा से शक्ति का जागरण होने पर मन्त्रयोग, लययोग, हठयोग और राजयोग-चारों का विकास होते देखा गया है। इसलिए शक्ति-जागरण को ही महायोग कहते हैं।

सौन्दर्य लहरी में आचार्य शंकर ने भगवती उमा के ध्यान पर अत्यधिक बल दिया है इसका कारण यह है कि यद्यपि कुण्डलिनी का जागरण योग और उपासना की अन्यान्य पद्धतियों से हो सकता है, परन्तु उनमें भी ध्यान का कुछ न कुछ समावेश अवश्य रहता है। इसलिए ब्रह्म अथवा आत्मसाक्षात्कार की उपलब्धि हेतु ध्यान सर्वोपरि होता है यथा—

पूजा कोटि सम स्तोत्रं, स्तोत्र कोटि सयोजपः।

जप कोटि सम ध्यानं, ध्यान कोटि समोलयः॥

भावार्थ

करोड़ों पूजनों के समान स्तोत्र, करोड़ों स्तोत्रों के समान जप, करोड़ों जपों के समान ध्यान तथा करोड़ों ध्यानों के समान लय (समाधि) होती है।

धूमावती एवं बगलामुखी तांत्रिक साधनाएं

श्री गायत्रीविद्या साधना

महाश्री गायत्रीविद्या की साधना वैदिक, पौराणिक, तांत्रिक, दक्षिणामार्ग, वाममार्ग, ब्रह्मतंत्र आदि अनेक विधियों से की जाती है। जैसे कि वैदिक विधानों में तांत्रिक-पद्धति का आश्रय लेने पर ही उनकी व्यवस्थित पद्धति बनती है, उसी प्रकार तांत्रिक विधानों में वैदिक मंत्रों का प्रयोग और विहित है। महाश्री गायत्रीविद्या का साधन मिश्रित पद्धति अर्थात् वैदिक, तांत्रिक और पौराणिक विधियों के मिश्रण से भी किया जा सकता है। अन्य देवताओं की साधना के समान महाश्री गायत्रीविद्या साधना में भी मंत्र जाप के साथ-साथ ध्यान, स्तोत्र व कवच आदि के पाठ से तत्काल सिद्धि प्राप्त होती है।

महाश्री गायत्रीविद्या की वाममार्गी तांत्रिक साधना और ब्रह्मयोगिक तांत्रिक साधना के अधिकारी वही साधक हो सकते हैं, जिन्होंने शक्ति मार्ग से, तांत्रिक सिद्धि प्राप्त कर ली हो अर्थात् जो मन और इन्द्रियों के नियंत्रण द्वारा संभोग में समाधि लगाने में समर्थ हों दूसरे शब्दों में जिन्हें शुक्रस्तंभन और दीर्घ संभोग तंत्र में सिद्धि प्राप्त हो गयी हो। यद्यपि महाश्री गायत्रीविद्या साधन हेतु, अनेक मंत्र, ध्यान, स्तोत्र और कवच हैं, परन्तु इस पुस्तक में हम उन्हीं सिद्ध मंत्रों, स्तोत्रों और कवचों आदि को दे रहे हैं, जिन्हें तत्काल सिद्धि हेतु महाश्री गायत्रीविद्या ने हमें अधिकृत किया है।

उपासना के दो भेद बहिरंग और अंतरंग होते हैं। जब तक कुंडलिनी का जागरण नहीं होता है, तब तक बहिरंग पूजा की आवश्यकता होती है। जब कुंडलिनी का जागरण हो जाता है, तब अंतर्पूजा का प्रारंभ हो जाता है। महाश्री गायत्रीविद्या की बहिरूपासना गायत्रीविद्या यंत्र पर अथवा विग्रह अथवा चित्र पर की जाती है, तथा अंतरूपासना के लिए साधक को अपनी देह ने ही महाश्री गायत्रीविद्या के किसी विग्रह का आवाहन करना चाहिए। ब्रह्म-योग में ब्रह्मयोगी शक्ति-संगम (संभोग) के समय स्वयं में शिव का आवाहन करता है, और अपनी पत्नी में शक्ति का आवाहन करता है तत्पश्चात् संभोग अवस्था में दोनों (पति-पत्नी) के एकाकार स्वरूप में महाश्री गायत्री यंत्र की अवधारणा की जाती है। तंत्र-योग में भी भैरव और भैरवी के एकत्व (संभोग अवस्था) रूप पर महाश्री गायत्री यंत्र की परिकल्पना की जाती है। ब्रह्म-योग और तंत्र-योग में शक्ति-संगम के समय बाह्य भाव अथवा अंतर्भाव अथवा मिश्रभाव (बाह्य और अंतर) से उपासना की जा सकती है।

महाश्री गायत्रीविद्या का सूक्ष्म महाश्री गायत्रीविद्या के मंत्र और स्थूल शरीर महाश्री गायत्रीविद्या यंत्र अथवा विग्रह हैं, महाश्री रुद्राणी अथवा गायत्री निवास करती हैं। इसलिए गायत्रीविद्या यंत्र ब्रह्मांड का प्रतीक है। चूंकि ब्रह्मांड और पिण्ड (मानव शरीर) की रचना तात्त्विक रूप से एक है। इसलिए मानव शरीर को महाश्री गायत्रीविद्या का रूप माना जाता है। शक्ति-संगम के समय ब्रह्म-योग और तंत्र-योग द्वारा ब्रह्म एकत्व की अनुभूति होती है। अतः शिव-शक्ति अथवा भैरव-भैरवी के इस संयोग (एक पिण्ड, एक प्राण, एक मन) से भी महाश्री गायत्रीविद्या यंत्र की अवधारणा की जाती है।

टिप्पणी— यह ध्यान देने योग्य है कि श्री महाश्री रुद्राणी, नीलश्री, गौरश्री, अरुणश्री, सिन्दूरश्री, छिन्नश्री, धूमश्री, पीतश्री, यामश्री और कंचनश्री के यंत्र क्रमशः महाविद्या दक्षिण कालिका, तारा, षोडशी, भुवनेश्वरी, भैरवी, छिन्नमस्ता, बगलामुखी, मातंगी और कमला के यंत्रों के समान होते हैं।

समय (शिव-शक्ति का साम्य) और समयाचार

‘समय’ शब्द अनेक अर्थवाची है। ‘समय’ का पर्यायवाची शब्द ‘साम्य’ है, तदनुसार शिव और शक्ति का साम्य ही ‘समय’ कहलाता है। इस सिद्धांत के अनुसार शक्ति समया और शिव समयः है शिव-शक्ति का साम्य अधिष्ठान (यंत्र का पूजन-अर्चन), अनुष्ठान, अवस्थान (भजन, कीर्तन, नृत्य आदि), नाम, रूप, ध्यान आदि के द्वारा किया जाता है।

ग्यारहवीं सदी में आचार्य भास्कर राय ने ललिता सहस्रनाम के भाष्य में उल्लेख किया है कि दहराकश (चक्रों पर) में जो ध्यान साधना की जाती है, उसे समयपदवादी (समयाचारी) कहा जाता है। समयाचार के प्रतिपादक शुक, सनक, सनन्दन, सनतकुमार, विश्वामित्र और वशिष्ठ हैं, जिनके द्वारा समयाचार पर विरचित ग्रन्थ ‘पंच शुभागम’ है, जो वैदिक मार्ग का अनुसरण करता है। आचार्य शंकर ने श्रीविद्या की साधना समयाचार पद्धति से की थी।

संक्षेप में साधक जब दहराकाश में महाश्री गायत्रीविद्या यंत्र अथवा शिव-शक्ति का मानसी पूजन ओर ध्यान करता है, वह समयाचार पूजन कहलाता है। दहराकाश की यह मानसी पूजा यद्यपि साधक की रुचि के अनुसार किसी भी चक्र की जा सकती है, तथापि हमारे विचार से यह मानसिक पूजन, अनाहतचक्र, आज्ञाचक्र और व्योमचक्र पर अत्यधिक फलदायी होती है।

कौलाचार, वामाचार, दक्षिणाचार व मिश्राचार

कौलाचार पद्धति में बाह्याकाश पूजन को महत्त्व दिया जाता है। भोजपत्र, स्वर्णपत्र, रजतपत्र अथवा ताम्र पत्र पर यंत्र का निर्माण कर उसमें सावरण देवता का पूजन बाह्याकाश पूजन कहलाता है।

कौलाचार मार्ग में महाश्री गायत्रीविद्या यंत्र के केन्द्र बिन्दु में महाश्री रुद्राणी गायत्री का पूजन किया जाता है, इस प्रकार का पूजन ‘पूर्व कौलाचार’ अथवा दक्षिण मार्ग कहलाता है। ‘उत्तर कौलाचार’ अथवा ‘वाम मार्ग’ में स्त्री (भैरवी अथवा शैवेशी) को शक्ति का स्वरूप मानकर उसकी योनि की पूजा की जाती है। इस प्रकार की साधना में पंचमकार अर्थात् मद्य, मांस, मत्स्य, मैथुन और मुद्रा का प्रत्यक्ष प्रयोग किया जाता है। ‘समयाचार’ से पराशक्ति का मानसी पूजन किया जाता है। इस मार्ग में मद्यपान साधक के सहस्रदल कमल से निःसृत अमृत बिन्दु का पान है। काम, क्रोध आदि पशुओं का ज्ञान खड्ग से विनाश ही मांस भक्षण है। इन्द्रियों का निग्रह ही मत्स्य है। सात्विक आहार ही मुद्रा है। सहस्रार चक्र में कुंडलिनी का शिव से मिलन ही मैथुन है।

यह ध्यान देने योग्य है कि जिस प्रकार वाममार्ग में मद्य, मांस, मत्स्य, मैथुन और मुद्रा प्रत्यक्ष सेवन पंचमाकार हैं, उसी प्रकार दक्षिणमार्ग में मनन, मंत्र, मन, मौन और मुद्रा का अवलम्बन पंचमाकार हैं। यद्यपि वाममार्ग और दक्षिणमार्ग की प्रारंभिक साधना बाह्यांतर होती है, परंतु जैसे-जैसे साधक अपनी साधना में उन्नति करता है, वैसे-वैसे उसकी साधना अभ्यांतरिक होती जाती है और धीरे-धीरे वह बाह्यांतरिक साधना को कम करता जाता है, और अंत में पूर्णरूपेण अभ्यांतरिक साधना का अवलम्बन कर वह साक्षात्कार करने में सफल हो जाता है। कुछ साधक प्रारंभ से ही बाह्यांतरिक और अभ्यांतरिक साधनों का अवलम्बन साथ-साथ करते हैं, ऐसी साधना को मिश्राचार अथवा बाह्याभ्यांतर कहते हैं।

महाश्री गायत्रीविद्या यंत्र की आराधना में संलग्न वाममार्गी साधक पंचमाकार की महती उपयोगिता स्वीकार करते हैं। कल्पसूत्र में पंचमाकार को ब्रह्मानन्द का अभिव्यंजक माना गया है। यथासंभव पंचमाकार से महाश्री गायत्रीविद्या का पूजन गुप्त रूप से करना चाहिए। परन्तु कुछ अवसरों (चक्र पूजा) पर प्रकट रूप से भी पंचमाकार से महाश्री गायत्रीविद्या के पूजन का विधान है।

वेदमार्गी आचार्य, वाममार्गी साधना को अत्यन्त निकृष्ट मानकर उसकी निन्दा करते हैं। वाममार्गी कौलों और वेदमार्गियों का यह विरोध ऋग्वेद में भी दृष्टिगोचर होता है।

महाश्री गायत्रीविद्या साधना का अधिकार

महाश्री गायत्रीविद्या साधना में प्रयोजन के अनुसार साधना हेतु किसी विशेष ऋतु, तिथि, मुहूर्त आदि की विशेष अपेक्षा नहीं होती है। महाश्री गायत्रीविद्या की साधना कौलाचार (कर्मकाण्ड सहित) और समयाचार (कर्मकाण्ड रहित) भी की जा सकती है। हमारे अनुभवानुसार महाश्री गायत्रीविद्या की साधना, मंत्रों तथा महाश्री गायत्री यंत्रों द्वारा भी बना कर्मकाण्ड के पूर्ण सफल होती है।

यह ध्यान देने योग्य है कि तंत्र साधना में जाति, धर्म, देश आदि का कोई बन्धन नहीं है। चाण्डाल से लेकर ब्राह्मण तक सभी भगवती गायत्रीविद्या की सन्तान हैं, अतः उनकी उपासना का अधिकार सबको है। इस शाश्वत तथ्य की पुष्टि आचार्य शंकर के जीवन की निम्नलिखित घटना से होती है।

वर्ण-व्यवस्था निरर्थकता

एक दिन आचार्य शंकर गंगास्नान के लिए चले और जब वे मणिकर्णिका घाट के निकट आए, तब उन्होंने देखा कि सामने से एक कुरूप चाण्डाल चला आ रहा है। शंकर ने चाण्डाल को सम्बोधित करते हुए कहा— 'अरे चाण्डाल! कुत्तों के साथ तुम एक ओर खड़े हो जाओ और हमें निकल जाने दो।'।

चाण्डाल को अपनी बात अनसुनी कर आगे बढ़ते देखकर आचार्य शंकर ने किंचित उत्तेजित होकर कहा— 'अरे रुको! रोको अपने कुत्तों को, और हमारा मार्ग छोड़ दो।'।

आचार्य शंकर की बात को पुनः अनसुनी कर उस चाण्डाल ने एक विकट अट्टहास के साथ आचार्य शंकर को सम्बोधित करके लोकबद्ध संस्कृत भाषा में कहा— 'तुम किसे हट जाने को कह रहे हो? आत्मा को या देह को? आत्मा तो सर्वव्यापी और सतत् शुद्धस्वभाव है। यदि देह को एक ओर हटाने को कह रहे हो देह तो जड़ है, वह कैसे हट सकता है? और तुम्हारी देह से मेरी देह किस अंश में भिन्न है? तुम "एकमेवाद्वितीयम्" इस ब्रह्मतत्त्व में प्रतिष्ठित होने का मिथ्या अभिमान करते हो। सत्त्वदृष्टि से ब्राह्मण और चाण्डाल में कोई भेद नहीं है। गंगा जल में प्रतिबिम्बित सूर्य और सुरा में प्रतिबिम्बित सूर्य में क्या भेद है? क्या ये ही तुम्हारा ब्रह्मज्ञान है?

चाण्डाल के इन ज्ञानयुक्त वचनों को सुनकर शंकर स्तम्भित और लज्जित हो गए उनके मन में आया कि निश्चय ही यह दैवी लीला है। वहां पर उन्होंने हाथ जोड़कर स्तुति प्रारम्भ कर दी— 'जो सब भूतों के प्रति सम्यज्ञानी है, तदनुरूप ही जिनका व्यवहार है, वही मेरे गुरु हैं। उनके चरणों में कोटि—कोटि प्रणाम करता हूँ।'

सहसा चाण्डाल और कुत्ते अन्तर्हित हो गये।

उपर्युक्त आख्यान से सिद्ध होता है कि भगवान शंकर ने आचार्य शंकर को सनातन धर्म में व्याप्त जाति—पाति के कृत्रिम आवरण को नष्ट करने का आदेश दिया था। परन्तु ब्राह्मणों के भय से आचार्य शंकर जाति—पाँति की प्रथा का विरोध करने का नैतिक साहस नहीं जुटा पाये, जो हिन्दू धर्म के लिए बड़ा दुर्भाग्यपूर्ण रहा। हमारे विचार से यदि आचार्य शंकर अपनी शक्ति बौद्ध धर्म के विरोध में न लगाकर जाति—पाँति की प्रथा के समूल उन्मूलन में लगाते तो वे वैदिक धर्म के सच्चे उद्धारक होते। बौद्धधर्म, जैनधर्म, कौलधर्म आदि तो वैदिक धर्म के ही रूप हैं। उनके उद्गम और विकास का कारण वैदिक धर्म में आई कुरीतियों और विकृतियाँ थीं। बौद्धधर्म, जैनधर्म, कौलधर्म आदि तो सदैव वर्ण व्यवस्था का विरोध करते रहे हैं। अतः वे साधुवाद के पात्र हैं।

वैदिक धर्मों का समन्वय

गंभीरता से विचार करने पर यह तथ्य स्पष्ट होता है कि हिन्दू धर्म के अतिरिक्त बौद्धधर्म, जैनधर्म, कौलधर्म आदि का आधार भी वैदिक दर्शन है, और उनकी संस्कृति भी वैदिक संस्कृति से मिलती—जुलती है। आचार्य शंकर ने जिस प्रकार वैष्णव, गाणपत्य, शैव, शाक्त और सौर सम्प्रदायों का समन्वय किया था, यदि वे उसी प्रकार वैदिक दर्शन पर आधारित सभी धर्मों अर्थात् हिन्दू, बौद्ध, जैन आदि के समन्वय करने का प्रयत्न करते, तो यह उनकी महान उपलब्धि होती।

भारतीय संस्कृति का संयोजन

भारतीय संस्कृति सप्त—संस्कृतियों का महान संयोजन है। भारत में विश्व के 7 महान धर्म (हिन्दू, मुस्लिम, बौद्ध, ईसाई, जैन, पारसी और सिख) विद्यमान हैं। जिस प्रकार विश्व के सप्त खण्ड (एशिया, यूरोप, अफ्रीका, उ. अमेरिका, आस्ट्रेलिया, ग्रीनलैण्ड.

आदि) सप्त सिंधुओं (उ. प्रशांत, द. प्रशांत, उ. अटलांटिक, द. अटलांटिक, पू. आर्कटिक, प. आर्कटिक, हिन्द महासागर आदि) पर आधारित हैं, उसी प्रकार भारतीय संस्कृति भी सप्त धर्मों पर आधारित है। हमारी संस्कृति सप्त सरिताओं का संगम है। सप्त पदों का दिव्य गीत है। विश्व को इस संगम में स्नान करके पवित्र होने दो और दिव्य गीत का आनन्द लेने दो। भारत में प्रचलित सप्त धर्म भारतीय संस्कृति के सप्त स्वर एवं सप्त आयाम हैं जिस प्रकार आकाश में सप्त ऋषियों का बड़ा महत्व है, उसी प्रकार भारत में सप्त संस्कृतियों का बड़ा महत्व है और ये संस्कृति भारत की सनातन संस्कृति में इस प्रकार घुलमिल गई हैं कि इनके बिना भारतीय संस्कृति की परिकल्पना अधूरी होगी। हम बड़े भाग्यवान हैं, क्योंकि हमारी संस्कृति विश्व की एक महान संस्कृति है। हमारा कर्तव्य है कि हम हमारी महान संस्कृति का विश्व में प्रचार—प्रसार कर मानव जाति को सत्य—अहिंसा और सुख—शांति का दर्शन देकर कृतार्थ करें।

तंत्र योग विषय भ्रांतियाँ

उत्तर कौलाचार (वाममार्ग) अर्थात् तंत्र योग में काम ऊर्जा का विकास कर ब्रह्म से एकत्व (शिव—शक्ति का साम्य) स्थापित किया जाता है, इसमें काम शक्ति को योजनाबद्ध रूप से आध्यात्मिक रूप से आध्यात्मिक शक्ति में रूपान्तरित कर शिव—शक्ति (ब्रह्म) के एकत्व का साक्षात्कार किया जाता है। इसमें संभोग उद्देश्य न होते हुए शिव—शक्ति के एकत्व की अनुभूति का साधन मात्र होता है।

इस योग के संबंध में अनेक भ्रांतियाँ हैं, इनमें से प्रमुख भ्रांतियाँ निम्नलिखित हैं—

1. साम्प्रदायिक मतभेद।
2. कुछ वाममार्गियों का पथ भ्रष्ट होकर असंयमित और उन्मुक्त यौनाचार में लिप्त हो जाना।

वाम मार्ग (तंत्र योग), शैवमार्ग और शक्ति मार्ग कोई नये मार्ग नहीं हैं। इनकी आयु वैदिक काल (3500 ईसा.पूर्व) से अधिक है। ऋग्वेद काल में बहुत से ऐसे समृद्ध नगर थे, जिनके निवासी लिंग की पूजा करते थे और वेदज्ञ आर्य उनसे द्वेष करते थे। श्रीमद्भागवत आदि ग्रंथों में शिव और दक्ष के वैर कथा का वर्णन है। शिव को शाप देते हुए, दक्ष ने जिस मार्ग का उल्लेख किया है, वह वाममार्ग पर घटित होता है। धीरे—धीरे आर्यों ने तंत्र मार्ग की महत्ता और शिव—शक्ति की आराधना और महत्व को स्वीकार कर लिया था। परन्तु आज भी अनेक विद्वान बिना तंत्रयोग के ज्ञान को समझे हठधर्मिता और साम्प्रदायिक द्वेष के कारण तंत्रयोग की निन्दा करते रहते हैं।

कुछ वाममार्गी पथ भ्रष्ट होकर उन्मुक्त यौनाचार में लिप्त हो जाते हैं। जिसके कारण विरोधियों को तंत्रयोग के विषय में भ्रांतियाँ फैलाकर उसकी निन्दा करने का सुअवसर प्राप्त हो जाता है, जो सर्वथा अनुचित है। क्योंकि यदि किसी सम्प्रदाय कुछ संत अपनी काम कुंठाओं के कारण यौनाचार में लिप्त हो जाते हैं, तो हमें बिना सोचे समझे उस सम्प्रदाय की निन्दा करने का नैतिक अधिकार नहीं होता है। यहां पर हम

स्वर्गीय कवि मैथलीशरण गुप्त की प्रसिद्ध पुस्तक 'भारत-भारती' की निम्नलिखित पंक्तियां प्रस्तुत कर रहे हैं—

तन मन तथा धन भक्त जन अर्पण किया करत जहाँ ।

भण्ड साधु सुकर्म का तर्पण किया करत वहाँ ॥

चीर हरणादिक वहां प्रत्यक्ष लीला जाल हैं ।

भक्त स्त्रियाँ हैं गोपियाँ, गोस्वामी ही गोपाल हैं ॥

श्री कृष्ण की आड़ में करते अनंगोपासना ।

धन्य ऐसे भक्तजनों को धन्य उनकी वासना ॥

उपर्युक्त पंक्तियों से सनातन धर्मावलम्बियों को शिक्षा लेनी चाहिए, परन्तु अन्य धर्मावलम्बियों को हमारे धर्म का पूर्ण अध्ययन किए बिना पूरे सनातन धर्म की निन्दा करने को नैतिक अधिकार प्राप्त नहीं होना चाहिए ।

खेद का विषय है कि हमने महाभारत और गीता के कृष्ण को भुलाकर विदेशियों के कुचक्र से कुछ पौराणिक कथाओं को आधार बनाकर श्री कृष्ण-भक्ति को शृंगारिक बनाकर अपने मनोरंजन का सस्ता साधन बना लिया है । सनातन धर्म की रक्षा के लिए हमे अपनी इस भूल का परिमार्जन करना चाहिए और गीता और महाभारत के श्री कृष्ण की छवि को पुनः प्रतिष्ठित करना चाहिए ।

आगम-निगम-रहस्य

विचार-कक्षा के अन्तरतल पर पहुँचे हुए विदितवेदितव्य महामहिमाशाली महामहर्षियों ने सम्पूर्ण शब्दराशि को आगम-निगम भेद से दो भागों में विभक्त किया है। कारण इसका यही है कि प्रकृति सिद्ध नित्य-शब्द ब्रह्म इन्हीं दो भागों में विभक्त है। यद्यपि 'अथो वागेवेदं सर्वम्' (ऐ० आ० 3/1/6) 'याचीमा विश्वाभुवनान्यर्पिता' (त० ब्रा० 2/7/7/4/5) इत्यादि श्रौत-सिद्धांत के अनुसार वाक्-तत्त्व से प्रादुर्भूत होने वाले शब्द-प्रपञ्च से कोई भी स्थान खाली नहीं है, तथापि स्तम्बररूप तमोविशालसर्ग; यक्ष, राक्षस, पिशाच, गन्धर्व, पिंग, ऐन्द्र, प्रजापत्य, ब्राह्म भेद भिन्न अष्टविध सत्त्वविशालसर्ग नाम से प्रसिद्ध 14 प्रकार के भूत सर्ग के साथ प्रधानरूप से अग्निवाक् और इन्द्रवाक् का ही सम्बन्ध है। 'यथाग्निगर्भा पृथ्वी तथा द्यौरिन्द्रेण गर्भिणी' (शत० 14/9/7/20) के अनुसार पृथ्वी अग्निमयी है। द्युलोकोपलक्षित सूर्य इन्द्रमय है। यद्यपि इन दोनों लोकों से अतिरिक्त तीसरा अन्तरिक्ष (भुवः) लोक और है। भूः (पृथ्वी), भुवः (अन्तरिक्ष), स्वः (द्यौः-सूर्य)। इन तीनों लोकों से प्रजा-निर्माण होता है। पृथ्वी में अग्नि की सत्ता है। इससे मनुष्य लोक कहा जाता है। अन्तरिक्ष में चन्द्रमा की सत्ता है। इससे पितर-प्रजा का संबंध है। इसी आधार पर 'विधूर्ध्वभागे पितरो वसन्ति' (सिद्धांत-शिरोमणि) यह कहा जाता है। यही दूसरा पितृलोक है। द्युलोक में सूर्य की सत्ता है। इससे देव-प्रजा का संबंध है। इसी आधार पर 'चित्रं देवानामुदगात्' यह कहा जाता है। यही तीसरा देवलोक है। तीनों ही 'वागिति पृथ्वी' (जै० उ० 4/22/11) 'वाग्ध चन्द्रमा भूत्वोपरिष्टतिस्थौ' (शत० 10/5/1/4) के अनुसार वाङ्मय है, तथापि प्रधानता पृथ्वी और सूर्य-वाक्क्री ही मानी जाती है। कारण इसका यह है कि पार्थिव एवं सौर अग्नि अन्नाद (अन्न खाने वाले) है। मध्यपतित चन्द्रसो- 'एष वै सोमो राजा देवानामन्नं य चन्द्रमाः' (श० 1/6/4/5) के अनुसार इन अग्नियों का अन्न बन रहा है। अन्न जल अन्नाद के उदर में चला जाता है तो केवल अन्नाद सत्ता ही रह जाती है। अन्न की स्वतंत्रता हट जाती है। जैसा कि श्रुति कहती है-

द्वयं वा इदम्-अत्ता चैवाद्यजच ।

तद्यदोभयं सभा गच्छति-अतैवाख्यायते नाद्यम् ।

स वै यः सो'त्ताग्निरेव सः ।।

(शत० 10/6/3/1) इति ।

इसीलिए त्रैलोक्य के लिये 'द्यावापृथ्वी' व्यवहार ही होता है। इस प्रकार प्रधान रूप से पृथ्वी लोक, सूर्य लोक, दो ही लोक रह जाते हैं। दोनों अग्निमय हैं। पार्थिकवाग्नि गायत्राग्नि हैं। सौर-अग्नि सावित्राग्नि हैं। 'तस्य वा एतस्याग्नेवार्गवोपनिषत्' (श०



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.

षोडशोपचार—

आसन—स्वागत—पाद्य अर्घ्य, आचमनीय, मधुपक्र आचमनीय स्नानीय वस्त्र, अलंकार गन्ध, पुष्प, धूप, दीप एवं नैवेद्य ये षोडशोपचार के अन्तर्गत आते हैं।

तान्त्रिक ग्रन्थों में कहीं—कहीं 18 प्रकार के उपचार एवं 64 प्रकार के उपचारों का भी वर्णन किया गया है। साधक अपनी शक्ति व सामर्थ्य के अनुसार किसी भी प्रकार के उपचार को अपना सकता है।

बहिर्याग के 5 उपकरण होते हैं—

1. अभिगमन, 2. उपादान, 3. इज्या, 4. स्वाध्याय एवं 5. योग

अभिगमन— देव स्थान का स्वच्छीकरण, निर्माल्य का प्रवाही करण अभिगमन है।

उपादान— उपचारों के संग्रह को उपादान कहते हैं।

इज्या— उपचारों से पूजा करने को इज्या है।

स्वाध्याय— मन्त्रार्थ की भावना के साथ जप करना, सूक्त स्तोत्र, कवच—हृदय—सहस्रनाम का पाठ करना या नाम गुण लीला का कीर्तन करना स्वाध्याय कहलाता है।

योग— साधक—साधना एवं साधन इन तीनों में अभेद बुद्धि रखना योग है।

सद्गृहस्थ को अन्तर्याग एवं बहिर्याग दोनों करने चाहिए, किन्तु ब्रह्मचारी, वानप्रस्थ एवं यति को केवल अन्तर्याग ही करना चाहिए। काम्य प्रयोगों में अन्तर्याग एवं बहिर्याग दोनों को करना अनिवार्य होता है, निष्काम प्रयोगों में एक या दोनों योग करने के लिए साधक की इच्छा पर है। अन्तर्याग के महत्व में कहा गया है कि— अन्तर्यागस्य महिमा सर्वश्रेष्ठः प्रकीर्तितः।

नापेक्षित देश शुद्धिर्नापि काल शरीरयोः।

नापेक्षिता देश शुद्धिर्नापि काल शरीरयोः॥

योगे जपे मानसे वौ तथा कर्माणि निश्चितं।

सर्वदा शक्यते कर्तुं मानसी निखिला क्रिया॥

जप— मंत्र की बार—बार आवृत्ति का नाम ही जप है। जप के तीन भेद होते हैं—

1. मानसिक, 2. उपांशु एवं 3. वाचिक।

मंत्र का मन ही मन ध्यान करना मानसिक जप कहलाता है। जिह्वा एवं ओष्ठ को हिलाते हुए जो केवल स्वयं को ही सुनायी दे, इस प्रकार के जप को उपांशु कहते हैं। वाणी द्वारा स्पष्ट मन्त्रोच्चारण करना वाचिक कहा जाता है।

स्तोत्र, कवच, सहस्रनाम आदि का मन ही मन पाठ करना या मन्त्र को उच्चस्वर से जपना निषिद्ध है। केवल मारण प्रयोग में ही वाचिका जप करना चाहिए। शेष सभी प्रयोगों में मानसिक अथवा उपांशु जप करना चाहिए।

वाचिक जप का फल यज्ञ तुल्य होता है। इसी प्रकार उपांशु के जप का शतगुना तथा मानसिक जप का सहस्रगुणा फलदायी होता है। पाद्मनारदीय में लिखा है, कि सिद्धि के लिए मानसिक, पुष्टि के लिए उपांशु तथा मारण आदि क्रूर कर्मों के लिए



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.

करने को प्रदक्षिणा कहते हैं। विष्णु, शिव, शक्ति, गणेश और सूर्य आदि देवताओं की 4,1,2,1,3 अथवा 7 परिक्रमाएँ करनी चाहिए।

46. साधना— साधना 5 प्रकार की होती है— 1. अभाविनी, 2. त्रासी 3. दोर्वोधी, 4. सौतकी तथा 5. आतुरो।

(1) अभाविनी— पूजा के साधन तथा उपकरणों के अभाव से, मन से अथवा जलमात्र से जो पूजा साधना की जाती है, उसे अभाविनी कहते हैं।

(2) जो त्रस्त व्यक्ति तत्काल अथवा उपलब्ध उपचारों से या मानसोपचारों से पूजन करता है, उसे त्रासी कहते हैं, यह साधना समस्त सिद्धियाँ देती है।

(3) बालक, वृद्ध, स्त्री, मूर्ख अथवा ज्ञानी व्यक्ति द्वारा बिना जानकारी के की जाने वाली पूजा दाबांधी कही जाती है।

(4) व्यक्ति मानसिक सन्ध्या कर कामना होने पर मानसिक पूजन तथा निष्काम होने पर सब कार्य करें। ऐसी साधना को सौतकी कहा जाता है।

(5) रोगी व्यक्ति स्नान एवं पूजन न करें। देव मूर्ति अथवा सूर्यमण्डल की ओर देखकर, एक बार मूल मन्त्र का जप कर उस पर पुष्प चढ़ायें। फिर रोग की समाप्ति पर स्नान करके गुरु तथा ब्राह्मणों की पूजा करके पूजा विच्छेद का दोष मुझे न लगे— ऐसी प्रार्थना करके विधि पूर्वक इष्ट देव का पूजन करे तो इस साधना को आतुर कहा जाएगा।

47. अपने श्रम का महत्व— पूजा की वस्तुएं स्वयं लाकर तन्मय भाव से पूजन करने से पूर्ण फल प्राप्त होता है तथा अन्य व्यक्ति द्वारा दिए गए साधनों से पूजा करने पर आधा फल मिलता है।

48. वर्णित पुष्पादि—

(1) पीले रंग की कट सरैया, नाग चम्पा तथा दोनों प्रकार की वृहती के फूल पूजा में नहीं चढ़ाये जाते।

(2) सूखे, वासी, मलिन, दुषित तथा उग्र गन्ध वाले पुष्प देवता पर नहीं चढ़ाये जाते।

(3) विष्णु पर अक्षत, आक तथा धतूरा नहीं चढ़ाये जाते।

(4) शिव पर केतकी, बन्धुक (दुपहरिया) कुन्द, मौलश्री, कौरैया जयपर्ण, मालती और जूही के पुष्प नहीं चढ़ाये जाते।

(5) दुर्गा पर दूब, आक, हरसिंगार, बेल तथा तगर नहीं चढ़ाये जाते।

(6) सूर्य तथा गणेश पर तुलसी नहीं चढ़ाई जाती।

(7) चम्पा तथा कमल की कलियों के अतिरिक्त अन्य पुष्पों की कलियाँ नहीं चढ़ाई जाती।

49. ग्राह्य पुष्प— विष्णु पर श्वेत तथा पीले पुष्प एवं तुलसी, सूर्य एवं गणेश पर लाल रंग के पुष्प, लक्ष्मी पर कमल एवं शिव के ऊपर आक, धतूरा, बिल्वपत्र तथा कनेर के पुष्प विशेष रूप से चढ़ाये जाते हैं। अमलतास के पुष्प तथा तुलसी को निर्माल्य नहीं माना जाता।



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.

देव की छवि पर स्थिर हो जाता है तथा वह इष्ट की शक्ति एवं कृपा द्वारा शुद्ध एवं शक्तिमान हो जाता है। सतत् मन्त्र जाप से साधक का मन अपने इष्ट की छवि से इतना अधिक परिपूर्ण हो जाता है कि वहाँ अन्य किसी वस्तु के लिए स्थान ही नहीं रहता है।

मन्त्र चराचर में व्याप्त परम पिता सच्चिदानन्द का मूर्तिमन्त स्वरूप है। जप से मन के अन्य सभी विचार (बार-बार उठने वाले) नष्ट हो जाते हैं, और केवल शुद्ध आत्मा का विचार ही रह जाता है। जप से शुद्धि, परिपक्वता, सत्य, आनन्द, अमरत्व ज्ञान, सार्वभौमता इत्यादि तत्त्व जुड़े हैं।

मन्त्र का जाप एक दम ठीक एवं शुद्ध हो तथा उसके अर्थ का भी मनन चलता रहे, इसका हमें ध्यान रखना चाहिये। हमारे हृदय के अन्तरतम कोने तथा आत्मा से हमें यह अनुभव करना चाहिए कि मन्त्र सर्वत्र व्याप्त है। यंत्रवत् मन्त्र जाप का लाभ अपने स्थान पर है, परन्तु पूर्णरूपेण लाभ तभी प्राप्त होता है, जब मन्त्र के अर्थ को हृदय की गहराइयों में धारण कर उसे अत्यन्त क्रियाशील बना दिया जाये।

पाँच प्रकार के जप —

जप को निम्न पाँच प्रकारों में विभाजित किया गया है:—

1. **श्रव्य जप:** इनमें मन्त्र जाप इस प्रकार किया जाता है, कि आस पास बैठा व्यक्ति मन्त्र ध्वनि को सुन सके। आरम्भ में साधक को इसी प्रकार मन्त्र जाप करना चाहिये। कुछ समय के अभ्यास के पश्चात् मन शान्त एवं स्थिर हो जाता है। इस स्थिति में मन उपांशु जप की ओर बढ़ने के लिये परिपक्व हो जाता है।
2. **उपांशु जप:** इसमें मन्त्र का जाप इस प्रकार किया जाता है, कि वह केवल साधक द्वारा ही श्रव्य हो। इसके सतत् अभ्यास के द्वारा कुछ समय पश्चात् साधक मानसिक जप कर सकने के योग्य हो जाता है।
3. **मानसिक जप:** इसमें मन्त्र का जाप मन ही मन किया जाता है। यह कहा जाता है कि मानसिक जप में, साधक को परम ज्ञान प्राप्ति की स्थिति में पहुँचा देने का सामर्थ्य है।
4. **लिखित जप:** इसमें साधक द्वारा सैकड़ों बार मन्त्र को कागज पर लिखा जाता है। मन्त्र के अक्षरों को लघु रूप में सावधानी पूर्वक लिखा जाता है साथ ही मानसिक जप भी चलता रहता है।
5. **अजपा जप अथवा सहजा जप:** बिना किसी प्रयत्न के जब मन्त्र का जप सहज रूप से होता है, तो उसे अजपा जप कहते हैं। यह विश्वास किया जाता है, कि अजपा जप सीधा हृदय से उत्पन्न होता है, जब कि अन्य जप मुख द्वारा होते हैं, जिससे धीरे-धीरे मानसिक एवं शारीरिक विकारों को उत्पन्न करने वाले कारण नष्ट हो जाते हैं।



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.

न्यासोपरान्त निम्नानुसार ध्यान करें—

ध्यान

“अत्युच्या मलिनाम्बराखिलजनोद्वेगावहा दुर्मना,
रूक्षामित्रितया विशालदशना सूर्योदरी चन्चला ।
प्रस्वेदाम्बुचिता क्षुधाकुलतनुः कृष्णातिरूक्षाप्रभा,
ध्येया मुक्तकचा सदप्रिय कलिर्धूमावतीमन्त्रिणा ।।”

भगवती धूमावती का स्वरूप विवर्ण है, चंचल है और दीर्घ काया है, कृष्ण वर्ण है । खुले हुए रुखे केश व विधवाओं जैसा वेश है । कौए की ध्वजा वाले रथ में बैठी है । विरल दंतावती है, सूप जैसे हाथ, रुखे नैत्र हैं । देवी भक्तों को वर तथा अभय मुद्रा में बैठी है । रोग, शोक, कलह, दरिद्रता के नाश के लिए, मैं आपको प्रणाम करता हूँ ।

पीठ पूजा

उक्त प्रकार से ध्यान करने के बाद पीठादि पर बनाये गये सर्वतोभद्र मण्डल में मण्डूकादि से लेकर परतत्त्वान्त पीठदेवताओं को समर्पित कर—

“ ऊँ मं मण्डूकादि परतत्त्वान्त पीठ देवताभ्यो नमः ।”

इस मन्त्र द्वारा पीठ—देवताओं की पूजा करके नव—पीठ शक्तियों की निम्नलिखित मन्त्रों से पूजा करें ।

पूर्वादि आठ दिशाओं में क्रमशः—

ऊँ कामदायै नमः ।
ऊँ मानदायै नमः ।
ऊँ नक्तायै नमः ।
ऊँ मधुरायै नमः ।
ऊँ मधुराननायै नमः ।
ऊँ नर्मदायै नमः ।
ऊँ भोगदायै नमः ।
ऊँ नन्दायै नमः ।

मध्ये—

ऊँ प्राणदायै नमः ।

उक्त मन्त्रों से पीठ—शक्तियों की पूजा करके स्वर्ण आदि से निर्मित यन्त्र तथा मूर्ति को ताम्रपात्र में रख कर, घृत द्वारा उसका अभ्यंग करके तथा दूध एवं जल द्वारा



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.

श्री भैरव उवाचः

शृणु देवि परं गुह्यं न प्रकाश्यं कलौयुगे ।
कवचं श्रीधूमवत्याः शत्रुनिग्रहकारकम् ॥२॥
ब्रह्माद्या देवि सततं यद्वशादरिघातिनः ।
योगिनो भवन्ति शत्रुघ्ना यस्या ध्यानप्रभावतः ॥३॥

विनियोगः

ॐ अस्य श्रीधूमावतीकतचस्य पिप्पलादऋषिरनुष्टुप्छन्दः श्री
धूमावती देवता धूं बीजं शक्तिः धूमावती कीलकं शत्रु हनने पाठे
विनियोगः ।

ॐ धूं बीजं मे शिरः पातु धूं ललाटं सदावतु ।
धूमा नेत्रयुगं पातु वती कर्णौ सदावतु ॥४॥
दीर्घा तूदरमध्ये तु नाभि मे मलिनाम्बरा ।
शूर्पहस्ता पातु गुह्यं रुक्षा रक्षतु जानुनी ॥५॥
मुखं मे पातु भीमाख्या स्वाहा रक्षतु नासिकाम् ।
सर्वविद्याऽवतु कण्ठ विवर्णा बाहुयुग्मकम् ॥६॥
चंचला हृदयं पातु धृष्टा पार्श्वे सदाऽवतु ।
धूमहस्ता सदाऽवतु ।

धूमहस्ता सदा पातु पादौ पातु भयावहा ॥७॥
प्रवृद्धरोमा तु भृशं कुटिलां कुटिलेक्षणा ।
क्षुत्पिपासादिर्दता देवी भयदा कलहप्रिया ॥८॥
सर्वांग पातु मे देवी सर्वशत्रुविनाशिनी ।
इति ते कथितं पुण्यं कवचं भुवि दुर्लभम् ॥९॥
न प्रकाश्यं न प्रकाश्यं न प्रकाश्यं कलौ युगे ।
पठनीय महादेवि त्रिसन्ध्यं ध्यानतत्परैः ॥१०॥
दुष्टामिचारो देवेशि तद्गात्रं नैव संस्पृशेत् ॥११॥

॥ इति भैरवी-भैरव सम्वादे धूमावतीतत्त्वे धूमावती कवचं सम्पूर्णम् ॥

श्री धूमावती स्तोत्रम्

प्रातर्या स्यात्कुमारी कुसुमकलिकया जापमाला जपन्ती,
मध्याह्ने प्रौढरूपा विकसितवदना चारुनेत्रो निशायाम् ।
संध्यायां वृद्धरूपा गलितकुचयुगा मुण्डमालां वहन्ती,



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.

श्रान्ता शकाररूपा च षकारा खरवाहना ।
 सहाद्रिरूपा सानन्दा हरिणी हरिरूपिणी ।।40।।
 हराराध्या बालवा च लवंगप्रेमतोषिता ।
 क्षपाक्षयप्रदा क्षीरा अकारादिस्वरूपिणी ।।41।।
 कालिका कालमूर्तिश्च कलहा कलहप्रिया ।
 शिवा शन्दायिनी सौम्या शत्रुनिग्रहकारिणी ।।42।।
 भवानी भवमूर्तिश्च शर्वाणी सर्वमंगला ।
 शत्रुविद्राविणी शैवी शुम्भासुरविनाशिनी ।।43।।
 धकारमन्त्ररूपा च धूंबीजपरितोषिता ।
 धनाध्यक्षसुता धीरा धरारूपा धरावती ।।44।।
 चर्विणो चन्द्रपूज्या च छन्दोरूपा छटावती ।
 छाया छायावती स्वच्छा छेदिनी मेदिनी क्षमा ।।45।।
 बलिनी वर्द्धिनी वन्द्या वेदमाता बुधस्तुता ।
 धारा धारावती धन्या धर्मदानपरायणा ।।46।।
 गर्विणी गुरुपूज्या च ज्ञानदात्री गुणान्विता ।
 धर्मिणी धर्मरूपा च घण्टानादपरायणा ।।47।।
 घण्टानिनादिनी घूर्णा घूर्णिता घोररूपिणी ।
 कलिघ्नी कलिदूती च कलिपूज्या कलिप्रिया ।।48।।
 कालनिर्णशिनी काल्या काव्यदा कालरूपिणी ।
 वर्षिणी वृष्टिदा वृष्टिर्महावृष्टिनिवारिणी ।।49।।
 घातिनी घाटिनी घोण्टा घातकी घनरूपिणी ।
 धूंबीजा धूंजपा नन्दा धूंबीजजपतोषिता ।।50।।
 धूंधूंबीजजपासक्ता धूंधूंबीजपरायणा ।
 धूंकारहर्षिणी धूमा धनदा धनगर्विता ।।51।।
 पद्मावती पद्ममाला पञ्चयोनिप्रपूजिता ।
 अपारा पूर्णपूर्णा तु पूर्णिमापरिवन्दिता ।।52।।
 फलदा फलमोक्त्री च फलिनी फलदायिनी ।
 फूत्कारिणी फलावाप्त्री फलमौक्त्री फलान्विता ।।53।।
 वारिणी वारणप्रीता वारिपाथौधिपारगा ।
 विवर्णा धूम्रनयना धूम्राक्षी धूम्ररूपिणी ।।54।।
 नीतिर्नीतिस्वरूपा च नीतिज्ञा नयकोविदा ।
 तारिणी ताररूपा च तत्त्वज्ञानपरायणा ।।55।।



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.

मध्यांगचित्रवसना मध्यखिन्ना महोद्धता ।
 महेन्द्रसुरसम्पूज्या महेन्द्रपरिवन्दिता ॥104॥
 महेन्द्रजालसंयुक्ता महेन्द्रजालकारिणी ।
 महेन्द्रमानिता मान्या मानिनीगणमध्यगा ॥105॥
 मानिनीमानसंप्रीता मानविध्वंसकारिणी ।
 मानिन्याकर्षिणी मुक्तिर्मुक्तिदात्री सुमुक्तिदा ॥106॥
 मुक्तिद्वेषकरी मूल्यकारिणी मूल्यहारिणी ।
 निर्मूला मूलसंयुक्ता मूलिनी मूलमन्त्रिणी ॥107॥
 मूलमन्त्रकृताहार्द्या मूलमन्त्रार्घहर्षिणी ।
 मूलमन्त्रप्रतिष्ठात्री मूलमन्त्रप्रहर्षिणी ॥108॥
 मूलमन्त्रप्रसन्नास्या मूलमन्त्रप्रपूजिता ।
 मूलमन्त्रप्रणेत्रो च मूलमन्त्रकृतार्चना ॥109॥
 मूलमन्त्रप्रहृष्टात्मा मूलविद्या मलापहा ।
 विद्याऽविद्या वटस्था च वटवृक्षनिवासिनी ॥110॥
 वटवृक्षकृतस्थाना वटपूजापरायणा ।
 वटपूजापरिप्रीता वटदर्शनलालसा ॥111॥
 वटपूजाकृताह्लादा वटपूजाविवर्द्धिनी ।
 वशिनी विवशाराध्या वशीकरणमन्त्रिणी ॥112॥
 वशीकरणसम्प्रीता वशीकारकसिद्धिदा ।
 बटुका बटुकाराध्या बटुकाहारदायिनी ॥113॥
 बटुकार्चापरा पूज्या बटुकार्चाविवर्द्धिनी ।
 बटुकानन्दकर्त्री च बटुकप्राणरक्षिणी ॥114॥
 बटुकेज्याप्रदाऽपारा पारिणी पार्वतीप्रिया ।
 पर्वताग्रकृतावासा पर्वतेन्द्रप्रपूजिता ॥115॥
 पार्वतीपतिपूज्या च पार्वतीपतिहर्षदा ।
 पार्वतीपतिबुद्धिस्था पार्वतीपतिमोहिनी ॥116॥
 पार्वतीयद्विजाराध्या पर्वतस्था प्रतारिणी ।
 पद्मला पद्मिनी पद्मा पद्ममालाविभूषिता ॥117॥
 पद्माजाढ्यपदा पद्ममालालंकृतमस्तका ।
 पद्ममार्चितपदद्वन्द्वा पद्महस्ता पयोधिजा ॥118॥
 पयोधिपारगन्त्री च पयोधिपरिकीर्चिता ।
 पाथोधिपारगा पूता पल्वलाम्बुप्रतर्पिता ॥119॥



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.

दुर्गास्वरूपिणीं देवीं दुष्टदानवदारिणीम् ।
 देवदैत्यकृतध्वंसा वंदे धूमावतीमहम् ।।16।।
 ध्वान्ताकारंघकध्वंसांमुक्तधम्मिल्लधारीरिणीम् ।
 धूमधाराप्रभां धीरां भजे धूमावतीमहम् ।।17।।
 नर्तकीनटनप्रीतां नाटयकर्मविवर्द्धिनीम् ।
 नारसिंहींनराराध्यां नौमि धूमावतीमहम् ।।18।।
 पार्वतीपतिसम्पूज्या पर्वतोपरिवासिनीम् ।
 पद्मारूपां पद्मापूज्यां नौमि धूमावतीमहम् ।।19।।
 फूत्कारसहितश्वासां फट्मन्त्रफलदायिनीम् ।
 फेत्कारिगणसंसेव्या सेवे धूमावतीमहम् ।।20।।
 बलिपूज्यां बलाराध्यां बगलारूपिणीं वराम् ।
 ब्रह्मादिवंदिताम् विद्यां वंदे धूमावतीमहम् ।।21।।
 भव्यरूपां भावाराध्यां भुवनेशीस्वरूपिणीम् ।
 भक्तभव्यप्रदां देवीं भजे धूमावती महम् ।।22।।
 मायां मधुमतीं मान्यां मकरध्वजमानिताम् ।
 मत्स्यमांसमहास्वादां मन्ये धूमावतीमहत् ।।23।।
 योगयज्ञप्रसन्नास्यां योगिनीपरिसेविताम्ह ।
 यशोदां यज्ञफलदां यजे धूमावतीमहम् ।।24।।
 रामाराध्यपदद्वन्दां रावणध्वंसकारिणीम् ।
 रमेशरमणीं पूज्यामहं धूमावतीं श्रये ।।25।।
 लक्ष्मीलाकलालक्ष्यां लोकवन्द्यपदाम्बुजाम् ।
 लम्बितां बीजोषाढ्यां वन्दे धूमावतीमहम् ।।26।।
 बक पूज्यपदाम्मोजां बकध्यान परायणाम् ।
 बालां बकारि सन्ध्येयां वन्दे धूमावतीमहम् ।।27।।
 शांकरी शंकर प्राणां संकटध्वंसकारिणीम् ।
 शत्रु संहारिणीं शुद्धां श्रये धूमावतीमहम् ।।28।।
 षडाननारि संहन्त्रीं षोडशीरूप धारिणीम् ।
 षाड्रसास्वादिनी सौम्यां सेवे धूमावतीमहम् ।।29।।
 सुरसेवितपादाब्जां सुरसौख्य प्रदायिनीम् ।
 सुन्दरीगण संसेव्यां सेवे धूमावतीमहम् ।।30।।
 हेरम्बजननीं योग्यां हास्यलास्य विहारिणीम् ।
 हारिणीं शत्रुसंघानां सेवे धूमावतीमहम् ।।31।।
 क्षीरोदतीर सम्वासां क्षीरपान प्रहर्षिताम् ।
 क्षणदेशोज्यपादाब्जां सेवे धूमावतीमहम् ।।32।।



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.

15-20 मिनट व्यतीत हुए होंगे, आंधी और तूफान शान्त हो गया। एकाएक पड़ौसी जन घर के पास से कहीं जा रहे थे, उनकी नजर गिरी दीवार पर पड़ी। वे घर में आए। ईंट-गारा-पत्थर हटाया तो मारे खुशी के कूदने लगे। सुखद आश्चर्य यह था कि पत्नी व बालक सकुशल थे। श्रीदेव के परिवार को बचा देखकर प्रसन्नता से झूम उठा। प्रेम से गदगद हो मां का स्तवन करने लगा व 21 लाख बगला मुखी जप का संकल्प लिया। आज वह सानन्द-सुखी, उच्च स्तरीय व्यवसायी है।

एक बार सागर मध्य प्रदेश के एक प्रसिद्ध बैंक मैनेजर एक षड्यन्त्र के शिकार हो गए थे और उनकी कोई गलती न होने पर भी वे षड्यन्त्र में इस प्रकार उलझे कि बस! उन्हें नौकरी से तत्काल निकाल दिया गया, उनकी प्रतिष्ठा, इज्जत व सम्मान धूल-धूसरित हो गया। इज्जत बचाना भारी हो गया। उन्हीं दिनों उनका टेलिफोन मेरे पास आया और उन्होंने बताया कि मैं व्यर्थ में ही फंस गया हूँ, तथा षड्यन्त्र का शिकार बनाया जा रहा हूँ। मैंने न किसी का कुछ बिगाड़ा है, और न ही एक पैसे का भी गबन किया है, न किसी पार्टी से मेरा संपर्क है। न ही मैं किसी षड्यन्त्र में शामिल हूँ। न जाने कैसा ग्रह चक्कर चला है कि ऐसी विपत्ति मेरे जीवन में आ गई है। मैं तो अभिमन्यु के समान चक्रव्यूह में फंस गया हूँ। अब आप ही चाहें तो मुझे बचा सकते हैं, उबार सकते हैं।

मैंने उसी समय टेलीफोन पर सूचित किया कि, तुम्हें बगलामुखी साधना प्रारम्भ कर देनी चाहिए। इस साधना का विशेष प्रभाव तब होता है, जब कि पाठ करते समय हम पूजन सामग्री में हर एक पीली चीज का प्रयोग करें। ज्यादा अच्छा यही रहता है कि धोती तथा अंगोच्छा पीले रंग में रंगे हुए हों? जिस समय बगलामुखी कवच का पाठ करें उस समय यही वस्त्र पहनें तो कहीं अधिक उत्तम है। मूँगे की माला पहने रहे एवं उसी से जाप भी करे। आसन भी पीले रंग का हो। सम्मुख पूर्व दिशा में बगलामुखी यन्त्र स्थापित हो।

बगलामुखी यन्त्र का ही प्रभाव है, कि इसे तंत्र-मंत्र के क्षेत्र में सर्वोपरि मान्यता मिलती रही, और इसके बारे में शोध और प्रयोग प्राचीन काल से बराबर होता रहा है। आश्चर्य की बात तो यह है कि इस यन्त्र का उपयोग जहाँ हिन्दु राजाओं ने अपने मर्दन के लिए किया, वहाँ मुस्लिम शासकों ने भी इसका प्रयोग कर कार्यों में सफलता प्राप्त की। इतिहास के पन्ने भरे पड़े हैं—जब-जब किसी शासक को शत्रुओं से भय हुआ है, उसने अपने राजकीय पुरोहित से बगलामुखी साधना करवाई या स्वयं मंत्र जाप किया। कई प्रतापी राजा ऐसे भी हुए हैं, जिन्होंने ऐसी विद्याओं के ज्ञाता विद्वानों को आश्रय दिया और अपने राज्य के विद्वानों को भी ऐसी विद्या में पारंगत करवाया।

जो भी व्यक्ति इस साधना को सम्पन्न करना चाहे, वह योग्य गुरु के निर्देशन में ही दीक्षित होकर सम्पन्न करें। यदि बगलामुखी यन्त्र धारण करना चाहे तो उसे चाहिए कि योग्य पंडित से प्राण-प्रतिष्ठित करवाकर प्राप्त करें।

सावधानी—

- इस साधना में आसन सहित साधक के वस्त्र धोती एवं अंग वस्त्र भी पीले रंग के हो।



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.

बगलामुखी षट्त्रिंशदक्षर मन्त्र प्रयोग—

‘मन्त्र महोदधि’ में भगवती बगलामुखी का 36 अक्षरों वाला मन्त्र निम्नानुसार बताया है—

“ॐ ह्लीं बगलामुखि सर्वदुष्टानां वाचं मुखं पदं स्तम्भय जिह्वां कीलय बुद्धिं विनाशाय ह्लीं ॐ स्वाहा ।”

विनियोग—

“अस्य श्री बगलामुखी मन्त्रस्य नारद ऋषिः बृहती छन्दः बगलामुखी देवता शत्रूणां स्तम्भनार्थे ((वा) मयाभीष्ट सिद्धये) जपे विनियोगः ।”

विधान—

इस मन्त्र का विधान निम्नानुसार है—

आचमन तथा प्राणायाम करने के पश्चात् देश—काल का विचार करते हुए बगलामुखी—मन्त्र की सिद्धि हेतु जप—संख्या के निर्देश तद्दशांश से क्रमशः हवन, तर्पण, मार्जन एवं ब्राह्मण भोजन रूप पुरश्चरण करने का संकल्प करें। फिर निम्नानुसार मन्त्रों से ‘न्यास’ करें।

ऋष्यादि—न्यास—

ॐ नारद ऋष्यै नमः शिरसि ।
बृहतोच्छन्दसे नमः मुखे ।
बगला देवतायै नमः हृदि ।
ह्लीं बीजाय नमः गुह्ये ।
स्वाहा शक्तये नमः पादयो ।
विनियोगाय नमः सर्वांगे ।

करन्यास—

ॐ ह्लीं अंगुष्ठाभ्यां नमः ।
बगलामुखि तर्जनीभ्यां नमः ।
सर्वदुष्टानां मध्यमाभ्यां नमः ।
वाचं मुखं पदं स्तम्भय अनामिकाश्यां नमः ।
जिह्वां कीलय कनिष्ठिकाश्यां नमः ।
बुद्धिं विनाशय ह्लीं ॐ स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ।



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.

वैष्णवी श्रीपादुकां..... ।

ॐ वाराह्यै नमः ।

वाराही श्रीपादुकां..... ।

ॐ इन्द्राण्यै नमः ।

इन्द्राणी श्रीपादुकां..... ।

ॐ चामुण्डायै नमः ।

चामुण्डा श्री पादुका..... ।

ॐ महालक्ष्मै नमः ।

महालक्ष्मी श्री पादुकां.... ।

उक्त मन्त्रों से अष्ट माताओं का पूजन कर पूर्ववत् पुष्पांजलि दें ।
उसके ऊपर ब्राह्मी आदि के समीप ।

ॐ असितांग भैरवाय नमः ।

असितांग भैरव श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।

ॐ रू रू भैरवाय नमः ।

रूरू भैरव श्रीपादुकां..... ।

ॐ चण्ड भैरवाय नमः ।

चण्डभैरव श्रीपादुकां.... ।

ॐ क्रोधभैरवाय नमः ।

क्रोधभैरव श्रीपादुकां.... ।

ॐ उन्मत्त भैरवाय नमः ।

उन्मत्त भैरवाय नमः ।

ॐ कपालभैरवाय नमः ।

कपालभैरव श्रीपादुकां..... ।

ॐ भीषण भैरवाय नमः ।

भीषण भैरव श्रीपादुकां..... ।

ॐ संहार भैरवाय नमः ।

संहारभैरव श्रीपादुकां.... ।

उक्त मन्त्रों से अष्ट भैरवों की पूजा कर पूर्ववत् पुष्पांजलि करें
इसके बाद षोडश दलों में पूर्वादि क्रम से ।

ॐ मंगलायै नमः ।

मंगला श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।

ॐ स्तमिन्यै नमः ।

स्तमिनी श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।

ॐ जृम्भिण्यै नमः ।

जृम्भिणी श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.

बगलामुखी साधना की कामना पूर्तिकारक प्रयोग विधि

1. मधु, शर्करा युक्त तिलों से होम करने पर मनुष्य वश में होते हैं।
2. मधु, घृत तथा शर्करा युक्त लवण से होम करने पर आकर्षण होता है।
3. तैल युक्त नीम के पत्तों से होम करने पर विद्वेष होता है।
4. हरितल, नमक तथा हल्दी से होम करने पर शत्रुओं का स्तम्भन होता है।
5. रात्रि के समय श्मशान की अग्नि में कोयला, घर का धुआँ, राई तथा मैसा गूगल से होम करने पर शत्रु का शीघ्र नाश होता है।
6. गिद्ध तथा कौए के पंख, सरसों का तेल, बहेड़ा तथा घर का धुआँ, इनका चिता की अग्नि में होम करके साधक शत्रु का उच्चारण कर देता है।
7. दुर्वा, गिलोय तथा लावा को शहद, घृत तथा शक्कर के साथ मिलाकर होम करने से सभी रोग शान्त होते हैं।
8. समस्त कामनाओं की सिद्धि के लिए पर्वत पर, वन में, नदी के तट पर अथवा शिवालय में बैठकर एक लाख मन्त्र—जप करें तथा मधु एवं शर्करा मिश्रित एक रंग वाली गाय के दूध को तीन सौ मन्त्रों से अभिमंत्रित कर पीने से सब प्रकार के विषों का प्रभाव नष्ट हो जाता है।
9. श्वेतपलाश की लकड़ी से निर्मित उत्तम खँड़ाऊ को आलता से रंग कर, उसे इस मन्त्र द्वारा एक लाख बार अभिमंत्रित कर, पाँव में पहन कर चलने से क्षण भर में ही सौ योजन की दूरी तय हो जाती है।
10. पारा, मैनतिल तथा हरताल को शहद के साथ पीस कर उक्त मन्त्र द्वारा एक लाख बार अभिमंत्रित कर अपने शरीर पर लेप करने वाला मनुष्य अदृश्य हो जाता है तथा इस दृश्य को देखने वाले सब लोग आश्चर्य चकित रह जाते हैं।
11. हरताल तथा हल्दी के चूर्ण को धतूरे के रस में मिलाकर, उससे षट्कोण में 'ह्रीं' बीज के साथ 'अमु कं स्तम्भय' लिखें फिर मन्त्र के शेष अक्षरों से लाकर वेष्टितकर, मूपुर का निर्माण करें। तदुपरान्त कुम्हार के चाक की मिट्टी लाकर उसके द्वारा एक सुन्दर बैल की मूर्ति तैयार करें। उस मूर्ति के भीतर मन्त्र को रख दें। फिर उस बैलपर हरताल का लेप करके, प्रतिदिन उसकी पूजा करें। इसमें साधक शत्रुओं की वाणी तथा सभी क्रियाकलापों को स्तम्भित कर देता है।

उक्त 'बगलामुखी स्तम्भन यन्त्र' का स्वरूप नीचे प्रदर्शित है।



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



You have either reached a page that is unavailable for viewing or reached your viewing limit for this book.



पं. राधाकृष्ण श्रीमाली

पं. राधाकृष्ण श्रीमाली ज्योतिष, तंत्र, मंत्र और वास्तु के स्थापित हस्ताक्षर हैं। अनेक दशकों में आपने देश को सैकड़ों पुस्तकें दी हैं। आपकी रचनाओं और खोजों के चलते ही आपको दर्जनों बार सम्मानित किया जा चुका है। वे सिर्फ कर्मकांडी नहीं हैं, बल्कि अनुभववाद पर भी भरोसा करते हैं। 'षोडशी एवं भुवनेश्वरी तांत्रिक साधनाएं' में इस साधना का रहस्य उजागर करते हुए पं. श्रीमाली ने कई महत्वपूर्ण विषयों को प्रामाणिक ढंग से निरूपित किया है। उनका मत है कि वस्तु की सत्ता तभी तक है जब तक उसमें शक्ति प्रतिष्ठित है। शक्ति सत्ता में कल्याण भाव को प्राप्त होता पदार्थ 'शिव' है। यह पुस्तक पं. श्रीमाली की खोज और अनुभव का सम्मिश्रण है। इसलिए यह पुस्तक संग्रहणीय तो है ही आध्यात्मिक यात्रा के लिए जरूरी भी है।



डारशन बुक्स

ISBN : 81-288-0674-2



Rs. 60.00

A.H.W. Sameer Series